दर्शन की समस्याएँ

द्रव्य और गुण (Substance and Attributes)

- पश्चिमी जगत् में मूल द्रव्य की खोज यूनानी दर्शन से प्रारम्भ हुई. यूनानी दर्शन के पिता थेलीज (ईसा पूर्व 624–550 वर्ष) ने पौराणिक अन्धविश्वासों से मुक्त सर्वप्रथम जल को सृष्टि का मूल द्रव्य माना.
- इसके साथ ही एनेक्सिमेंडर (ईसा पूर्व 611–547 वर्ष) ने सृष्टि का मूल द्रव्य पुदगल माना. उसने इसे असीम प्राण-पुज के रूप में अविनाशी, शाश्वत और सर्वत्र व्याप्त स्वीकार किया.
- कालान्तर में एनेक्सिमेनीज (ईसा पूर्व 585–528 वर्ष) ने वायु को सृष्टि का मूल द्रव्य स्वीकार किया. उसके अनुसार वायु के संकुचन व विस्तार से अग्नि, हवा बादल, जल, पृथ्वी और चट्टानें उत्पन्न होती हैं.
- इसी चिन्तनक्रम में पाइथागोरस ने 'संख्या' को तो हेरेक्लीटस ने अग्नि को मूल द्रव्य माना. अग्नि के विनाश से ही जल की उत्पत्ति होती है और जल से अन्य विकास होते हैं. अग्नि ही तर्कबुद्धि है.
- यूनानी दर्शन इसके पश्चात् द्रव्य तथा परिवर्तन की समस्या से जूझने लगा. इस क्रम में जेनोफेनीज, पारमेन्डीज और जेनों ने एक शाश्वत अपरिवर्तनीय सत की कल्पना की. पारमेन्डीज ने उसे 'नित्य अब' (Eternal now) कहा. यह एक प्रकार से आध्यात्मिक द्रव्य था.
- इसी क्रम में एम्पेडोक्लीज (495–435 ई. पू.) ने पृथ्वी, जल, अग्नि व वायु को प्राकृत जगत् का कारण मानते हुए प्रेम और घृणा के चालक तत्व को स्वीकार किया.
- एनेक्सगोरस ने विश्व के मूल में प्रयोजन देखा. अतः उसने गुणात्मक विश्व की संरचना के मूल में असंख्य तत्वों को स्वीकारा. इन तत्वों के मूर्त संघात पृथ्वी जलादि हैं, लेकिन इन्हें गति देने वाला परम व्यापक तत्व बुद्धित्व भी है. इसे उसने Nous कहा.
- डेमोक्रिटिस (460–370 ई. पू.) ने प्रथम चार परिमाणात्मक अणुओं–पृथ्वी, जल, अग्नि व वायु को सृष्टि का द्रव्य मानकर अणुवादी, यांत्रिक व वैज्ञानिक दर्शन प्रस्तुत किया.
- इसके पश्चात् अरस्तू के उदय तक (384–322 ई. पूर्व) सम्पूर्ण अवधि में ज्ञान और नैतिकता सम्बन्धी विचार छाये रहे और प्लेटो ने (427–347 ई. पूर्व) एक विशद व व्यवस्थित दर्शन दिया जिसमें सृष्टि के मूल्य द्रव्य को 'शुभ' का विचार माना गया और इसके अन्तर्गत असख्य सत व अविनाशी विचारों व एक असत (पुदगल या रिक्त प्रसर) के साथ सृष्टि का सृजन समझाया गया. यह पूर्ण रूप से अध्यात्मवादी दर्शन था.

अरस्तू का द्रव्य-विचार

- अरस्तू ने शुभ के विचार (सत) और असत (पुदगल) के द्वैत को नहीं स्वीकार किया. अरस्तू के अनुसार द्रव्य स्वतंत्र और निरपेक्ष सत्ता है उसमें आकार (विचार) और पुदगल (वस्तु) एक साथ होते हैं.
- सामान्य (मनुष्यत्व) और विशेष (विवेक-शीलता) स्वयं में द्रव्य नहीं है, परन्तु सामान्य और विशेष द्रव्य के अभाव में नहीं रह सकते हैं और द्रव्य भी सामान्य व विशेष के बिना अपना अस्तित्व खो देता है.
- द्रव्य विधेय, विशेषण या गुण नहीं हो सकता है, परन्तु ये द्रव्य के लिए प्रयुक्त होते हैं. 'अश्व काला है' में अश्व द्रव्य है जो कालेपन पर आश्रित नहीं है, परन्तु विधेय 'कालापन' उद्देश्य अश्व पर आश्रित है.
- इस प्रकार अरस्तू द्रव्य को सामान्य और विशेष का अपृथक् रूप में सम्मिलित या समरस रूप मानता है. फिर भी वह सामान्य (प्रत्यय या विचार) को अधिक सत मानता है. सामान्य सार है.
- अरस्तू के अनुसार विचार और वस्तु से संयुक्त मूल द्रव्य तो अमूर्त, निरपेक्ष और सार्वभौम है. अपने सामान्य रूप में वह स्थायी व शाश्वत है, परन्तु अपने विशेष रूप में समस्त परिवर्तन का स्रोत है.

महत्वपूर्ण विन्दु

* *अरस्तू के अनुसार सृष्टि के मूल में एक ऐसा द्रव्य है जो एक साथ अपने में आकार (विचार) और वस्तु को समाये हुए है. इस प्रकार प्लेटो के (सत और आभास) का द्वैत समाप्त हो जाता है, किन्तु प्रयोजन बना रहता है*
* *संसार में प्रत्येक वस्तु और व्यष्टि द्रव्य है. इस प्रकार, असंख्य द्रव्य है और ये द्रव्य उद्गामी क्रम से व्यवस्थित हैं. इनकी निचली सीमा निर्विकल्प पुदगल और उच्चतम सीमा विशुद्ध आकार (ईश्वर) है*
* *अरस्तू के अनुसार आकार रहित पुदगल (Pure matter) और पुदगल हीन आकार (Pure Being or Thought or God) एक विकासशील उद्गामी वर्तुल की निम्नतम और उच्चतम स्थितियाँ हैं*
* *इन दोनों सीमाओं के बीच भौतिक वस्तुएं, वनस्पति जीवन, पशु जीवन, मानवीय सृष्टि आदि स्थित हैं. इस प्रकार प्रत्येक व्यष्टिगत द्रव्य पुदगल और आकार का सम्मिश्रण है*
* *आकार वस्तु का सामान्य है जो अपने वर्ग की वस्तुओं में पाया जाता है और सार्वभौम है, परन्तु पुदगल (विशेष) भेद का निर्धारक है. वस्तुओं में भेद का कारण या उन्हें परिवर्तित रूप में लाने की शर्त तो पुदगल है, परन्तु स्फूर्ति का जनक या चालक शक्ति पुदगल में छिपा विचार ही है*
* *आकार (विचार) और पुदगल (वस्तु) एक ही द्रव्य में विद्यमान स्वयं में अपृथक्, किन्तु बुद्धि के लिए ही विभाज्य है*
* *आकार और वस्तु का न कहीं आदि है न अन्त, न उद्भव है न विनाश और यह सर्वथा अचिन्तनीय है. आकार सार्वभौम या सामान्य है और वस्तु विशेष है*

- अरस्तू का पुदगल एक दृष्टि से आकार व दूसरी दृष्टि से परिवर्तनशील वस्तु है. पुदगल यात्रा तो आकार दिशा है. लकड़ी पुदगल है और पलंग आकार है. पुदगल और आकार (विचार) वस्तुत: अविकसित व विकसित दशायें हैं.
- यही अरस्तू का शक्यता और सिद्धता का सिद्धान्त है. शक्यता सभावना है और सिद्धता पूर्णता या विकास है जैसे बीज और वृक्ष. पुदगल शक्यता है और ईश्वर सिद्धता या पूर्णता है.
- अरस्तू के द्रव्य सिद्धान्त में प्रयोजन और विकास तथा आध्यात्मिकता एवं वैज्ञानिकता को पूर्ण समर्थन मिल गया.

डेकार्ट का द्रव्य विचार

- बुद्धिवादी डेकार्ट (1596-1650) मानव में निहित तर्कबुद्धि की क्षमता पर अटूट विश्वास करता था. अपने दार्शनिक निष्कर्षों पर वह गणितीय विधि से पहुँचा और सर्वप्रथम उसने सन्देह पद्धति अपनाई.
- इस सन्देह के माध्यम से वह इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि सन्देहकर्ता (चिन्तनकर्ता) सत्य है 'मैं चिन्तन करता हूँ' अतः मेरी सत्ता है (अहं चिन्तयामि अतः अस्ति)
- स्वात्म की सत्ता सिद्ध करने के पश्चात् उसने ईश्वर की सत्ता को सिद्ध किया और ईश्वर को समस्त दृष्टि-सृष्टि का मूल द्रव्य माना.
- बाह्य जगत् में वस्तुएं शरीर और मन हैं. डेकार्ट ने शरीर (विस्तार) और मनस को ईश्वर द्रव्य के दो गुण माने, परन्तु इन दोनों को एक-दूसरे से पृथक् और स्वतन्त्र माना.
- निरपेक्ष द्रव्य ईश्वर है. मनस और शरीर (विचार व विस्तार) ईश्वर के सापेक्ष द्रव्य या लक्षण हैं और ईश्वर पर आधारित हैं.
- मनस और शरीर मौलिक रूप से एक-दूसरे से भिन्न और विरोधी गुणों वाले हैं तथा एक-दूसरे को प्रभावित करते हैं. मनस सदैव अविभाज्य है, किन्तु शरीर विभाज्य है.
- मनस और शरीर के सापेक्ष द्रव्यों को उनके सहज गुणों से जाना जा सकता है. ये गुण पर्याय (Modes) के रूप में प्रकट होते हैं.
- द्रव्य और गुण को बिना पर्यायों के सोच सकते हैं पर पर्यायों को द्रव्य व गुण के अभाव में नहीं सोचा जा सकता है. जैसे आकृति के बिना भी विस्तार बोधगम्य है, परन्तु चिन्तनशील द्रव्य के बिना कल्पना या सकल्प को सोचा नहीं जा सकता है.
- डेकार्ट का द्वैतवादी विचार सांख्य के प्रकृति-पुरुष के द्वैत के समान है.
- डेकार्ट के अनुसार द्रव्य-गुणों में परिवर्तन नहीं होता है, केवल पर्यायों में परिवर्तन होता है. जैसे शरीर सदैव विस्तारी है पर आकृति कुछ भी हो. अतः शरीर का सारभूत गुण विस्तार है. अन्य गुण शब्द, स्पर्शादि मात्र पर्याय हैं. ये शरीर के गुण नहीं हैं.
- विस्तार विभाज्य है और रिक्त प्रसर कहीं है नहीं इसलिए पुदगल भी विभाज्य है, अतः अणु नहीं हैं, सर्वत्र कणिकाएं हैं.
- विस्तार अनन्त है, क्योंकि भौतिक जगत् असीम है. विस्तार के विभाज्य होने के कारण ही संगठन और विघटन होता है और पुदगल विभिन्न रूप (गति के कारण) धारण करता है.
- विस्तार स्वयं में निष्क्रिय है, परन्तु निरपेक्ष द्रव्य ईश्वर ने पुदगल को गति और विश्राम से युक्त बनाया है. इस प्रकार डेकार्ट का विचार (पुरुष) और विस्तार (प्रकृति) का सिद्धान्त मशीनवाद के पक्ष में है. क्योंकि इससे ईश्वर का हस्तक्षेप सिद्ध नहीं होता है.
- डेकार्ट का निरपेक्ष द्रव्य ईश्वर अविनाशी व अपरिवर्तनशील है. ससार की वस्तुएं प्रकृति के नियम से संचालित होती हैं. प्रकृति के नियम वस्तुतः गति के ही नियम हैं.
- डेकार्ट के अनुसार समस्त पिण्डों (शरीरों) के भेद विभिन्न अंशों के सम्बन्धों के कारण है.
- इस प्रकार ठोस वस्तुएं वे हैं जिनमें सगठित अंश विरामावस्था में हैं और तरल वस्तुएं वे हैं जिनके अंश गतिवान हैं.
- समस्त सृष्टि विचार और विस्तार (पुरुष + प्रकृति) का खेल है. परम विचार या द्रव्य (ईश्वर) स्वयं सापेक्ष द्रव्यों का आधार है.
- यह ध्यानेय है कि सांख्य के द्वैतवाद में ईश्वर नहीं है, जबकि डेकार्ट के द्वैतवाद में ईश्वर परम द्रव्य है, इससे लगता है कि डेकार्ट का ईश्वर मानसिक-भौतिक सत्ता है. हालांकि डेकार्ट ने ऐसा कहा नहीं है. इसके विपरीत उसने विचार व विस्तार को स्वतंत्र पृथक् सापेक्ष द्रव्य कहा.
- डेकार्ट का द्रव्य विचार जो द्वैतवाद है वस्तुतः हमारे प्रचलित विचारों पर आधारित है. डयूरेन्ट ड्रेक के अनुसार यह "हमारी भाषा के व्याकरणगत ढाँचे से समर्थित है."
- सामान्य रूप से हम 'एक गज प्रेम', 'एक किलो आशा' अथवा 'पर्वत आशा करते हैं' जैसी अभिव्यक्तियाँ नहीं करते हैं. विचार व विस्तार के व्यावहारिक द्वैत को डेकार्ट ने तात्विक रूप प्रदान किया.
- फिर भी डेकार्ट ने मानव बुद्धि और गणितीय शुद्धता को शीर्ष स्थान दिया जिससे वैज्ञानिक विधि को प्रेरणा मिली. इसी कारण उसे 'आधुनिक दर्शन का पिता, कहा जाता है.

लॉक का द्रव्य-विचार

- डेकार्ट बुद्धि में कुछ जन्मजात विचारों के होने का पक्षधर था, इसीलिए वह बुद्धि-वादी कहलाया, किन्तु लॉक (1632-1704) शुद्ध अनुभववादी था अतः उसने जन्मजात विचारों का प्रबल खण्डन किया.
- लॉक के अनुसार दर्शन वस्तुओं (भौतिकी) का सत्य ज्ञान है. अतः मनुष्य की (1) ज्ञान का स्रोत, (2) ज्ञान का औचित्य व सीमा तथा (3) मानव ज्ञान की सीमा के परे न जाना—ये तीन समस्याएं हैं.
- लॉक के अनुसार अनुभव मात्र ज्ञान का स्रोत है सूर्य, चन्द्रमा, ऊष्मा, ईश्वर जैसे विचार तक जन्मजात नहीं है, क्योंकि ये विचार जन्मजात रूप में सर्वत्र नहीं पाए जाते हैं. समस्त विचारों के पीछे या तो अनुभव है या तर्कबुद्धि के अनुमान है जो ज्ञात तथ्यों से अज्ञात तथ्यों का निगमित करते हैं.
- लॉक के अनुसार मनस एक कोरी पटिया के समान है. वस्तु संवेदना मनस पर अंकित होती है और फिर अनुशीलन (Internal sense) कुछ नए विचार देता है.
- यथार्थ वस्तुओं से प्रथम प्रत्यक्ष में जो विचार मिलते हैं उन्हें सरल या शुद्ध विचार कहते हैं, लेकिन तुलना, विश्लेषण आदि से जो विचार जन्म लेते हैं उन्हें मिश्र विचार कहते हैं.
- शुद्ध विचारों में आने वाली वस्तुओं के गुण दो प्रकार के होते हैं. कुछ गुण वस्तु स्वयं के होते हैं जिन्हें प्राथमिक गुण कहते हैं जैसे ठोसत्व, विस्तार, आकृति, गति, विश्राम और संख्या.
- कुछ गुण जैसे शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गन्ध को गौण गुण कहते हैं. इन्हें इन्द्रियाँ वस्तुओं में उत्पन्न करती हैं. यही कारण है कि गौण गुणों के सम्बन्ध में मनुष्यों में मतैक्य नहीं होता है.
- समस्त ज्ञान सरल विचारों से प्रारम्भ होता है और प्राथमिक विचार ही वस्तुओं की अनुकृति होती है. मिश्र विचार तो अनुशीलन के परिणाम होते हैं.
- विचारों की सत्यता का प्रमाण यह है कि वह बाह्य वस्तु के अनुरूप हों अर्थात् विचार संवाद रखता हो. इस दृष्टि से सरल विचार सत् होते हैं, किन्तु मिश्र पर्याय मानव-मनस में सत हैं.
- फिर भी लॉक की दृष्टि में समस्त ज्ञान निश्चयात्मकता की दृष्टि से संभाव्य मात्र है. मानव का ज्ञान विचार की परिधि नहीं लाँघ सकता है. आस्था और श्रुति का ज्ञान दूसरा क्षेत्र है.
- लॉक के अनुसार मनुष्य वस्तु को विचारों के माध्यम से जानता है, वस्तु स्वयं को नहीं जानता है, यथार्थ वस्तु की सत्ता उसके अज्ञेय होने पर भी है, परन्तु विचारों की सत्ता मनस पर आधारित है.
- यथार्थ वस्तु के विचारों को हम जानते हैं वस्तु स्वयं को नहीं. अतः वस्तु की प्रकृति मानव के लिए रहस्य है, प्राथमिक विचार सभी मनुष्यों के लिए समान हो सकते हैं पर गौण विचारों में असमानता हो सकती है. लॉक की यह ज्ञान मीमांसा उसके द्रव्य-ज्ञान पर आधारित है जो अग्रलिखित है—

- लॉक ने आत्मा, वस्तुओं और ईश्वर की सत्तायें यथार्थ मानी जिनमें आत्मा की सत्ता सहजज्ञानपरक, वस्तुओं की सत्ता संवेदनापरक और ईश्वर की सत्ता तर्कबुद्धिपरक है.
- ईश्वर विशुद्ध आध्यात्मिक द्रव्य है. वह सत्य, अज्ञेय, विश्व को उत्पन्न करने में सक्षम, सर्वज्ञ और नित्य सत्य है.
- फिर भी जगत्-प्रक्रिया के मूल में दो द्रव्य हैं—भौतिक और मानसिक. इनमें मानसिक द्रव्य ज्ञाता और भौतिक द्रव्य ज्ञेय है.
- समस्त जगत् की रचना अत्यन्त सूक्ष्म कणिकाओं से हुई है. इनमें भार, आकार व गतिशीलता निहित है. ये जड़ कणिकाएं पुदगल के सक्रिय अंश हैं और इन्हीं पर पिण्डों के गौण गुण व कार्य आधारित हैं.
- परन्तु इन कणिकाओं के प्राथमिक गुणों की एकता, संगठन, प्रभाव गतिशीलता आदि के विषय में मानव बुद्धि यह नहीं जानती कि यह सब क्यों और कैसे हैं? अर्थात् वैज्ञानिक व्याख्या असंभव है.
- लॉक की कणिका-परिकल्पना ने आधुनिक भौतिक-रसायन विज्ञान की उपलब्धियों का सुझाव अवश्य दिया.
- यूनानी दार्शनिक डेमोक्रीटस के विरुद्ध लॉक ने यह प्रतिपादित किया कि अणु या कणिकायें सतत विभाज्य हैं, जबकि डेमोक्रीटस उन्हें अन्तिम रूप से अविभाज्य मानता था.
- ईश्वर परम द्रव्य है और वैसे ही सत् है जैसे दो रेखाओं के परस्पर काटने से सम्मुख कोण की समानता सत है. फिर भी ईश्वर का ज्ञान जन्मजात नहीं होता है. यह ज्ञान सत्ता, काल, ज्ञानशक्ति, सुख आदि की असीमता के विचार से अनुमेय होता है.
- लॉक डेकार्ट की भाँति मानव की सत्ता असंदिग्ध मानते हुए कहता है कि ईश्वर जैसी कोई अनादि सत्ता है, क्योंकि असत से सत उत्पन्न नहीं हो सकता है केवल सत से ही असत उत्पन्न हो सकता है.
- लॉक यह भी कहता है कि ईश्वर-विचार अनुमान का परिणाम नहीं वरन् स्वयं सिद्ध सत्य है फिर भी ईश्वर का सार मानव के लिए अगम्य है.
- लॉक उत्कट रूप से अनुभववादी रहा और तर्कबुद्धिवाद एवं सामान्यों का विरोधी भी. यह तर्क कि ईश्वर अवस्तु (Nothing) से वस्तु नहीं उत्पन्न कर सकता है लॉक के लिए कुतर्क है.
- उसने प्रत्युत्तर में कहा कि विचार गति कैसे उत्पन्न करता है—यह हम नहीं जानते हैं फिर भी हमारा अनुभव कहता है कि ऐसा होता है. इसी प्रकार ईश्वर द्वारा शून्य से संसार उत्पन्न करना संभव है.
- लॉक ने बलपूर्वक कहा कि चिन्तन रहित पुदगल ईश्वर का कारण नहीं है. ईश्वर ही पुदगल का कारण है.

विशिष्ट बिन्दु

** लॉक ने समस्त मानवी ज्ञान का स्रोत अनुभव को माना. उसने बुद्धिवादियों (डेकार्ट, स्पिनोजा, लाइबनित्ज आदि) के सिद्धान्त कि कुछ विचार बुद्धि में जन्मजात होते हैं, का घोर विरोध किया.*

** लॉक द्वारा ईश्वर के अस्तित्व की मान्यता बुद्धि पर आधारित है. वह ईश्वर की सत्ता स्वयं सिद्ध मानता है और यही मूल द्रव्य है.*

** जगत् का निर्माण जड़ कणिकाओं से हुआ है. इस भौतिक द्रव्य के अतिरिक्त मनस भी एक द्रव्य है जो कोरी पटिया के समान स्वयं में विचारहीन है और समस्त वस्तुज्ञान संवेदना के माध्यम से मनस पर अंकित होता है.*

** लॉक ने यह भी कहा कि प्राथमिक गुण वस्तु के और गौण गुण मन के होते हैं.*

** हम वस्तु स्वयं को नहीं जानते हैं केवल वस्तु के विचारों को जानते हैं. अतः समस्त मानवी ज्ञान परोक्ष है. साथ ही वस्तु स्वयं में रहस्य है.*

बर्कले (1685–1753) का आत्मपरक अध्यात्मवाद (Subjective Idealism)

- जॉर्ज बर्कले अनुभववादी विचारक तो था, परन्तु लॉक के अनुभववाद की समीक्षा करते हुए इस परिणाम पर पहुँचा कि जगत् का मूल द्रव्य केवल एक आध्यात्मिक सत्ता सार्वभौम मनस (ईश्वर) है.
- बर्कले के अनुसार भौतिक पिण्डों की सत्ता नहीं है केवल आध्यात्मिक सत्ताओं और ईश्वर की सत्ता है. बाह्य वस्तुएं तो हैं पर वे पुदगलीय नहीं हैं, वे केवल मानव-मन के विचार हैं. अतः सत्ता मानसिक है.
- बर्कले ने यह निष्कर्ष लॉक के विचार कि हम वस्तु स्वयं को नहीं जान सकते, जो कुछ जानते हैं वह वस्तु-संवेदना द्वारा मनस पर डाले गये टंकणों (विचारों) को ही जानते हैं, से ही निकाला.
- बर्कले के अनुसार बाह्य वस्तुओं की भौतिक सत्ताओं में विश्वास का कारण यह भ्रम है कि मनस के बिना बाह्य वस्तुएं देखी जा सकती हैं और यह कि मनस अमूर्त विचार बना सकता है.
- बर्कले के अनुसार रंग (हरा, नीला आदि) का विचार तो बनाया जा सकता है, परन्तु अनेकानेक रंगों के मिश्रण का एक सामान्य विचार जो न लाल हो न पीला, न हरा आदि नहीं बनाया जा सकता है.
- इसी प्रकार विस्तार, गति आदि का अमूर्त (निषेधात्मक लक्षणों) का विचार नहीं बनाया जा सकता है. क्या यह कल्पना सम्भव है कि हम सोचें कि एक ऐसा विस्तार (Extention) है जो न रंगा है, न आकृति है, न सतह है, न मात्रा है?
- नामवादी बर्कले सामान्यों (Universals) की सत्ता में विश्वास नहीं करता था, परन्तु विशेषों की सत्ता में विश्वास करता था. अतः उसने कहा कि मनस रहित विश्व का विचार या पुदगल निर्मित जगत का विचार अमूर्त विचार है.
- जब हम संवेदनाओं को ही जानते हैं और वस्तु को नहीं तो फिर संवेदनाओं के अभाव में अनदेखे पुदगल की सत्ता को कैसे स्वीकार किया जा सकता है. अनदेखा अस्तित्व असंभव है. अतः (किसी वस्तु का) होना प्रत्यक्ष में होना है. दृश्यन्ते इति वर्तते (Esse est percipi) का सिद्धान्त वैध है.
- बर्कले ने यह माना कि मनस (आत्मा) की सत्ता है, क्योंकि यही विभिन्न विचारों का कल्पित करता, उनका ज्ञाता और दृष्टा है और समस्त बाह्य वस्तुएं भी मनस के विचार हैं.
- अतः उस हर वस्तु की सत्ता है जिसे कोई भी मनस देख (प्रत्यक्ष कर) रहा है और उस वस्तु की भी सत्ता है जिसे कोई मानव मनस प्रत्यक्ष नहीं कर रहा है, क्योंकि उसे सार्वभौम मनस (ईश्वर) देख रहा है.
- यदि यह कहा जाए कि अगर मानव मनस नहीं थे या नष्ट हो जाएं तो भी क्या भौतिक सत्ताएं नहीं थीं या न होंगी. बर्कले का उत्तर यह होगा कि वस्तु सत्तात्मक तर्क प्रत्यक्ष कर लेने के बाद ही उभरा है. मूल प्रश्न यह है कि अनदेखे भौतिक संसार की सत्ता का प्रमाण क्या है?
- अतः पुदगलीय सत्ताएं नहीं हैं. अतः लॉक का प्रतिपादन कि प्राथमिक गुण वस्तु में (आकार, भार आदि) होते हैं गलत हैं. प्राथमिक गुण भी मानसिक हैं, क्योंकि प्राथमिक गुणों का ज्ञान केवल एक दृष्टि इन्द्रिय से नहीं वरन् दृष्टि और स्पर्शेन्द्रिय दोनों से होता है.
- क्या यह सभव है कि प्रत्यक्षण में किसी मेज की आकृति बाह्य जगत् में बनी रहे और उसका रग संवेदना द्वारा मनस में अंकित हो जाए?
- बर्कले के अनुसार मनस और वस्तु में निर्पेक्ष भेद भी नहीं है. कारण यह है कि समान ही समान का प्रत्यक्ष कर सकता है. विचार ही विचार का प्रत्यक्ष कर सकता है. अगर वस्तु मूल रूप से पुदगल होती तो मानव ज्ञान असंभव होता. अतः वस्तु स्वयं मानसिक है.

- बर्कले के अनुसार वस्तु मनस में ज्ञान उत्पन्न नहीं करता है. मानव मनस भी महान् मनस का विचार है अतः या तो ईश्वर या अन्य मनस (वस्तुए) ही विचार उत्पन्न करते हैं. इतना ही नहीं बिना पिण्डों को भी विचार उत्पन्न होते हैं जैसे स्वप्न में.
- बर्कले के दर्शन को आत्मगत अध्यात्मवाद (Subjective Idealism) कहा जाता है, क्योंकि वह ज्ञान की वस्तु को मनस पर आधारित मानता है. वस्तु स्वातंत्र्य उसे स्वीकार नहीं. दूसरे सभी अस्तित्वों को वह या तो विचार या मनस मानता है.
- अतः वह दो प्रकार की सत्तायें—मनस और विचार, दो प्रकार के मनस—असीम व ससीम, दो प्रकार के विचार—मानव सकल्प से उत्पन्न और ईश्वर संकल्प से उत्पन्न विचार—मानता है.

ध्यानेय बिन्दु

* *दृष्टि ही सृष्टि है. ज्ञेय वस्तुओं की सत्ता उनके जाने हुए होने पर आधारित है मनुष्य न भी जाने तो भी वे वस्तुए ईश्वर के ज्ञान पर आधारित हैं.*
* *प्राथमिक गुण और गौण गुण भी मानसिक हैं. पुदगल का विचार अमूर्तकरण का परिणाम है पुदगल का अस्तित्व नहीं है.*
* *वस्तुओं का स्वरूप वही है जैसी वे दिखाई देती हैं. वस्तु का अस्तित्व स्वतंत्र नहीं है और उनका प्रत्यक्ष अपरोक्ष (Direct) होता है.*
* *वस्तुओं का ज्ञान व्यक्तिगत रूप से भिन्न-भिन्न होता है, परन्तु यदि ईश्वर चाहे तो वह समान विचारों को दो मनसों में उत्पन्न कर सकता है.*
* *संवेदनाओं का कारण सक्रिय, अभौतिक अशरीरी द्रव्य आत्मा है जो बोध और सकल्प दोनों ही है, परन्तु इस आत्मा का प्रत्यक्ष संभव नहीं है.*
* *समस्त विचारों का सम्बन्ध ईश्वर प्रदत्त है. ईश्वर ही समस्त वस्तुओं (विचारों) को क्रमागत रूप से इन्द्रियों को देता है. यही क्रम प्रकृति के नियम हैं और यही नियमन ईश्वर के अस्तित्व का प्रमाण है.*

- बर्कले के अनुसार यह कहना कि आग ऊष्मा प्रदान करती है. एक व्यावहारिक कथन है. इसी प्रकार हम रोटी खाते और पानी पीते हैं न कि विचार खाने पीने की वस्तुयें हैं, परन्तु प्रश्न तो मूल स्वरूप का है.
- इसलिए उसने कहा था कि 'ऐसे मामलों में हमें बुद्धिमानों की तरह सोचना चाहिए और असभ्यों की तरह बात करना चाहिए'. क्या वैज्ञानिक यह नहीं कहते हैं कि 'सूर्य पूर्व में निकलता है'. परन्तु क्या यह सत्य है?
- बर्कले का अडिग तर्क यह है कि वस्तु की ज्ञेय स्थिति के पूर्व ज्ञाता होना तार्किक आवश्यकता है.
- बर्कले समस्त सृष्टि को सर्वोच्च मनस एवं असंख्य अन्य मनसों का सुसगत खेल मानता है और इसे एक प्रज्ञावान की कहानी मानता है.
- बर्कले ने अपने आत्मपरक अध्यात्मवाद से द्वैतवाद, नास्तिकतावाद और भौतिकतावाद का पूर्ण निषेध किया.
- इसके दर्शन की युक्तियुक्तता ने आगामी विचारकों को 'अहं केन्द्रित विषमावस्था' की समस्या से जूझने के लिए प्रेरित किया और नव्य-यथार्थवाद का संचलन गम्भीरतापूर्वक आगे बढ़ा.
- बर्कले के अनुभववाद में पुदगलीय वस्तु (ज्ञेय) मानसिक वस्तु बन जाने के कारण सत्ताहीन हो गयी. इस तर्क ने ह्यूम को बहुत प्रभावित किया और उसने ज्ञाता के अस्तित्व को नकार कर अनुभववाद को संशयवाद और अज्ञेयवाद में बदल दिया.

न्याय-वैशेषिक का द्रव्य सिद्धान्त

- न्याय और वैशेषिक दर्शन एक-दूसरे के सिद्धान्तों को स्वीकार करने के कारण पूरक दर्शन कहलाते हैं. इसीलिए वैशेषिक दर्शन का सृष्टि विज्ञान न्याय को और न्याय की ज्ञान मीमांसा वैशेषिक को स्वीकार्य है.
- न्याय-वैशेषिक ईश्वर (परवर्ती ईश्वर) की सत्ता स्वीकार करते हैं, परन्तु यह ईश्वर निमित्त कारण है, सृष्टि का मूल द्रव्य नहीं है.
- न्याय-वैशेषिक के अनुसार विश्व-निर्माण में सात मुख्य पदार्थ हैं—द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष, समवाय और अभाव. प्रथम तीन पदार्थों की वस्तुगत सत्ता है और शेष तीन बुद्धिगत या तार्किक हैं. अन्तिम तार्किक पदार्थ अभाव को बाद में स्वीकार किया गया.
- द्रव्य वह है जो अपने में गुण व कर्म समाहित करता हो और सह-अस्तित्व के रूप में समस्त जगत् का कारण हो, द्रव्य नौ हैं—पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, काल, प्रसर, आत्मा और मनस. यही शरीरी और अशरीरी वस्तुओं का निर्माण करते हैं.
- इनमें से पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आत्मा और मनस अनेक हैं और आत्मा को छोड़ कर सभी विस्तारी, कर्मशील, गतिशील और दूर और पास के सम्बन्ध रखते हैं. आकाश, काल और प्रसर सर्वव्यापी हैं.
- आकाश, काल, प्रसर, वायु, आत्मा और मनस का सामान्यतः प्रत्यक्ष नहीं होता है. परमाणु भी प्रत्यक्ष के विषय नहीं हैं. पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, शरीरी और सृजनात्मक हैं. समस्त भौतिक जगत् इन्हीं से निर्मित है.
- मनस आण्विक होते हुए भी कुछ उत्पन्न नहीं करता है, जबकि सर्वव्यापी आकाश शब्द का कारण है.
- सुख-दुःख, द्वेष, संकल्प, ज्ञान, श्वास प्रक्रिया, पलकों का उठना-गिरना घावों का स्वतः भर जाना, मनस की क्रियाएं एवं इन्द्रियों के संसर्गों के कारण आत्मा की सत्ता सिद्ध होती है, क्योंकि चेतना शरीर, इन्द्रियों और मन का सहज गुण नहीं है.
- आत्मा द्रव्य है और मूल रूप में यह बोध (चेतना) रहित है. परन्तु शरीर में मनस से सम्बन्धित होने के कारण इसमें चेतना उत्पन्न होती रहती है और इसे वस्तु ज्ञान होता है.
- यद्यपि आत्मा सर्वव्यापी है, लेकिन शरीर में सीमित होने पर ही इसमें ज्ञान, भाव और क्रियाशीलता उत्पन्न होती है.
- आत्माएं अनेक हैं और अपने कर्मों के फलस्वरूप पुनः नये शरीरों को धारण करती हैं. मुक्तावस्था में भी ये आत्माएं अपनी भिन्नता बनाये रखती हैं, जीवात्माएं और सर्वोच्च आत्मा (ईश्वर) दोनों समान तो हैं, लेकिन तादात्म्यगत नहीं हैं.
- आकाश, प्रसर और काल एक-एक हैं अनुभव एवं समस्त घटनाओं के घटने के आधार यही हैं. सत एक प्रक्रिया है और इसीलिए वह कालिक व प्रसरीय है.
- एक रिक्त प्रसर में ही अणुओं में सम्बन्ध संभव है. अतः अनेक प्रसर नहीं हैं. प्रसर से पूर्व-पश्चिम आदि दिशाओं का बोध होता है.
- प्रकृति में ठोस परिवर्तनों के लिए काल आवश्यक है जो परिवर्तनों का कारण नहीं वरन् शर्त है. काल से पहले, बाद का, तत्कालता का बोध होता है. काल भी एक और सर्वव्यापी है. पल, क्षण, घंटा, दिन, वर्ष आदि इसी के रूप हैं. काल नित्य द्रव्य है.
- प्रसर सह-अस्तित्व है तो काल क्रमिकता है. प्रसर का सम्बन्ध दृश्य वस्तुओं से है तो काल का सम्बन्ध विनष्ट और उत्पन्न वस्तुओं से है.
- आकाश सरल, अविरामी, असीम और निष्क्रिय द्रव्य है. इसका गुण शब्द है. परमाणुओं का संघात नित्य, सर्वव्यापी, एक आकाश के कारण ही संभव है. आकाश शब्द का उपादान कारण होने से प्रसर जो समस्त प्रभावों का सामान्य कारण है, से भिन्न है.
- वैशेषिक के अनुसार पंच-भूत—पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश समस्त सृष्टि के उपादान कारण हैं. पुदगल इन्हीं का मिश्रण है.

- प्रत्येक द्रव्य के असंख्य परमाणु (आकाश को छोड़कर) परस्पर संघात रूप में बनकर विविध गुणों वाली सृष्टि निर्मित करते हैं.
- पृथ्वी जलादि के परमाणु पांच प्रकार के पुदगल बनते हैं—ठोस (पृथ्वी), तरल (जल), प्रकाशवान (अग्नि), गैसजन्य (वायु), और ईथरजन्य (आकाश).
- पृथ्वी का मूल गुण गन्ध, जल का रस, अग्नि का रूप, वायु का स्पर्श और आकाश का शब्द है, परन्तु परस्पर संगठन के कारण पृथ्वी में गंध, रस, रूप, स्पर्श, जल में रस, रूप, स्पर्श, अग्नि में रूप, स्पर्श के गुण होते हैं.
- पृथ्वी, जल, अग्नि और वायु के परमाणु संगठित होकर महाभूत बन जाते हैं और इन्हीं चार महाभूतों से जड़ जगत् उत्पन्न होता है.
- सृष्टि प्रक्रिया में सर्वप्रथम प्रत्येक परमाणु अपने ही दूसरे परमाणु से जुड़कर द्वयणुक, फिर त्रषरेणु और चतुष्रेणु आदि बनता हुआ महाभूत बन जाता है.
- चारों महाभूत ईश्वर के अधीन अदृष्ट (जड़शक्ति जो जीवों के संस्कार का आलय है) से संचालित व क्रियाशील होकर सृष्टि का निर्माण करते हैं और ब्रह्मा (सर्वोच्च आत्मा) के सौ वर्ष पूरे होने पर उसी की इच्छा से उलटे क्रम में सृष्टि का विघटन हो जाता है.
- वैशेषिक व न्याय का अणुवादी सिद्धान्त अपने समय की विश्व-रचना सम्बन्धी महत्वपूर्ण परिकल्पना थी. आधुनिक विज्ञान प्रयोगों के आधार पर अणुवाद को पीछे छोड़कर अब शक्ति (Energy) सिद्धान्त पर रुका है. वैशेषिक सिद्धान्त अध्यात्मवादी बना रहा. विज्ञान को पता लगाना है. कि शक्ति के पीछे कोई आध्यात्मिक तत्व है या नहीं.

पुदगल (Matter) की बौद्धवादी मीमांसा

- भगवान बुद्ध की वाणी से चार आर्य सत्य निस्रत हुए, जिनमें केवल यह स्पष्ट हुआ कि बुद्ध ने जगत् की परिवर्तनशीलता को समझना ही प्रज्ञान माना और इसे ही सत्य कहा.
- उन्होंने द्रव्यों, आत्माओं, चिद्णुओं तथा वस्तुओं को शक्तियों, गतियों, क्रमों प्रक्रियाओं आदि के रूप में न्यूनीकृत कर दिया.
- उन्होंने कहा था कि सत्य संभवन (होना या सतत परिवर्तन) है. 'सब कुछ सत है' एक अति बिन्दु है, कुछ भी सत नहीं है' दूसरा अति बिन्दु है. सत्य मध्य में है अर्थात् संभवन है जिसे हम प्रत्यक्ष करते हैं और जिसका न आदि है न अन्त है.
- यही सार्वभौम कारणता का नियम (प्रतीत्य समुत्पाद) है. परिवर्तन द्रव्य रहित है. समस्त विश्व आवश्यकता के नियम से शासित है. यही प्रकृति सहित सम्पूर्ण सृष्टि का स्वभाव है.
- विश्व की समस्त घटनाएं—उत्पत्ति, स्थिति, प्रलय, उत्थान, पतन आदि मात्र आवश्यकता के नियम से शासित परिवर्तन के स्वरूप हैं. यह परिवर्तन चिड़िया रहित उड़ान के समान है.
- त्रिपिटकों में विश्व को पाँच नियमों से शासित बताया गया. इन नियमों को क्रमशः कम्मनियम (कर्मफल), उतुनियम (भौतिक जड़ वस्तुपरक), बीजनियम (वनस्पति जगत्), चित्त नियम (चेतनता) और धम्मनियम (पूर्णता की प्राप्ति).
- यही परिवर्तन का नियम बौद्धों ने 'क्षणिकवाद' के रूप में प्रस्तुत किया जिसका अर्थ यह है कि प्रत्येक वस्तु प्रति क्षण बदल रही है और यदि इसका निषेध किया जाए तो जमीन के आगामी स्तरों की व्याख्या न हो सकेगी.
- सर्वत्र अविरामी कारणता ही दृश्य है जैसे दीपक के जलने में एक-एक तेल की बूँद आती है और भ्रम यह होता है कि प्रकाश स्थायी है, परन्तु सत्य यह है कि प्रति क्षण काई क्रम इसके पीछे है.
- भगवान बुद्ध ने जगत् को निसत्त (सतहीन) और निज्जीव (आत्मविहीन) कहते हुए विभिन्न दशाओं का संघात माना. इसकी सत्ता मानते हुए इसे अवास्तविक कहा.
- बुद्ध ने दस तात्विक प्रश्नों के उत्तर नहीं दिए और इसी आधार पर चार बौद्ध सम्प्रदायों ने मूल द्रव्य की अलग-अलग व्याख्या की.
- मध्यमार्गियों (शून्यवाद) ने मन और जगत् की सापेक्षता के कारण दोनों को ही शून्य कहा और इस शून्यता को वाद में अवर्णनीयता कहा गया.
- विज्ञानवादियों ने मनस की ही सत्ता मानी और जगत् के मूल स्वरूप को जानने की अनभिज्ञता प्रकट करते हुए इसे भी मानसिक माना और सृष्टि को आलय विज्ञान का खेल माना.
- उपर्युक्त दोनों सम्प्रदायों के विचारों का प्रभाव बौद्ध-धर्म की महायान शाखा ने स्वीकार किया.
- सौत्रान्तिक सम्प्रदाय ने मन और बाह्य वस्तु की सत्ता स्वीकार तो की परन्तु यह माना कि वस्तु के विचारों को (अंकन के माध्यम से) जाना जा सकता है पर वस्तु स्वयं अज्ञेय रहती है. यद्यपि वस्तु की सत्ता है.
- वैभाषिक सम्प्रदाय ने मन और जगत् की सत्ताओं को पृथक् और सत्य घोषित किया. उन्होंने पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु के चार तत्वों को स्वीकार किया. उनके अनुसार समस्त वस्तुएं परमाणुओं के संघात के परिणाम हैं.
- पृथ्वी कठोर, जल शीतल, अग्नि उष्ण और वायु प्रवाही होते हैं. अणुवादी सिद्धान्त को सौत्रान्तिक ने भी माना और सौत्रांतिक व वैभाषिक सम्प्रदायों से जुड़े हीनयान धर्म ने भी इसे मान्यता दी.
- इनके अनुसार परमाणु में छः किनारे होते हैं और इसके अन्दर का प्रसर अविभाज्य होता है. यह एक और अदृश्य होता है, परन्तु अनेक परमाणुओं का समूह दृश्य होता है. परमाणु अत्यन्त सूक्ष्म होता हुआ भी रूपवान होता है.
- परमाणु लम्बा, छोटा, वर्गाकार, गोल, सीधा, टेढ़ा, ऊँचा, नीचा आदि कुछ भी नहीं होता है. यह अविभाज्य, अविश्लेष्य, अदृश्य, अश्रव्य, अस्पर्श्य आदि होता है अर्थात् यह इन्द्रियों का विषय नहीं होता है.
- संयुक्त परमाणु ही पृथ्वी आदि के निर्माता घटक हैं. परमाणु में स्पर्श, रूप, रस और गंध के गुण होते हैं. अदृश्य परमाणु है और दृश्य अणु है.
- किसी भी वस्तु में जो गुण प्रबल रूप से होता है, उसी के कारण वह वैसा जाना जाता है जैसे कठोर धातु में पृथ्वी, तरल धारा में जल, चिनगारी में अग्नि तत्व प्रबल होता है.
- वैभाषिक वस्तुओं के विश्व को भाजनलोक और प्राणियों के विश्व को सत्वलोक कहते हैं.
- आकाश असीम, नित्य, सर्वव्यापी, अरूप और अभौतिक द्रव्य है. यह वस्तु या अणु नहीं है और न संघात ही है.
- इसी प्रकार असंयुक्त (सरल) तत्व अप्रति संख्या निरोध है. यह किसी एक विषय पर गहन ध्यान है जिसमें अन्य प्रभाव समाप्त हो जाते हैं. प्रतिसंख्यानिरोध भी अत्यन्त सरल तत्व है जो अतीन्द्रिय ज्ञान का भावात्मक परिणाम है.
- उपर्युक्त द्रव्य सिद्धान्त बौद्ध सम्प्रदायों का है और यह संभव है कि इनके आचार्यों ने पुदगलीय मीमांसा में जैन दर्शन के प्रभाव को स्वीकार किया हो, क्योंकि जैनों ने जगत् की सत्ता को यथार्थ माना था.
- परन्तु स्वयं बुद्ध ने पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु व प्रसर का उल्लेख तो किया है. परन्तु उन्होंने परम सत को निरपेक्ष शून्य ही कहा और संसार की सत्ताओं को कर्म, कारणों और ऋतुओं से उत्पन्न माना. बुद्ध की निर्वाण-व्याख्या कि कुछ अजन्मा एवं

सरल है अन्यथा इस दुखमय संसार से बचना व्यर्थ होता' से सिद्ध है कि उन्होंने परम तत्व या द्रव्य की व्याख्या को गोपनीय रखा.

परमात्मा, आत्मा और जगत् (God, Soul and the World) सेण्ट अगस्टाइन (353 ई.)

- सन्त अगस्टाइन ईसाई था, परन्तु उस पर नव्य-प्लेटोवाद का प्रभाव था, उसने आस्था और बुद्धि का समन्वय किया. उसके अनुसार आस्था खोजती है और बुद्धि पाती है और बुद्धि फिर भी उस ईश्वर को खोजती है जिसे वह पा चुकती है.
- उसके अनुसार ईश्वर आस्था का विषय और विज्ञान बुद्धि का विषय है.
- उसने यह भी कहा था कि "विश्वास करो ताकि समझ सको, समझो ताकि विश्वास कर सको." इस प्रकार धर्म और दर्शन पूरक शास्त्र हैं.
- अगस्टाइन का ईश्वर सत्य, अनुभवातीत, सर्वशक्तिमान,, सर्वज्ञ परमशुभ, निरपेक्ष एकत्व, प्रज्ञा, संकल्प और बुद्धि एक साथ है.
- ईश्वर परम स्वतंत्र, परम पवित्र है और उसके निर्णय उसकी प्रकृति की भाँति अटल व स्थिर हैं.
- ईश्वर जगत् में व्याप्त बुराई का सृष्टा नहीं है. वह संकल्प और कार्य एक साथ है. जगत् की समस्त वस्तुओं के विचार उसमें पहले से थे.
- ईश्वर सत्य है अतः वह मनुष्य में भी है परन्तु नित्य होने के कारण वह मनुष्य से परे भी है. फिर भी वह उत्तमोत्तम व सर्वोच्च भाव है.
- सत्य, प्रज्ञान और शिव का सार तत्व है. संसार की वस्तुओं के रूप उसी के प्रतिबिम्ब है. संभवन (Becoming) उसका सार तत्व है. उसका होना, जानना और करना एक ही बात है.
- परमात्मा विशुद्ध, परिवर्तनहीन सत है. वह न प्रसर में है न काल में है. पर वह है, और नित्य अब है. सत्य व भाव रूप है अतः प्रेम की वस्तु है.
- अगस्टाइन त्रिदेवों (पिता, पुत्र और पवित्र आत्मन) को स्वीकार करता है, परन्तु उसकी भाषा पिता-स्वरूप के इर्द-गिर्द घूमती रही, क्योंकि उसके अनुसार पुत्र और आत्मन एक पिता के ही अंशभागी हैं.
- जगत् और ईश्वर में गहरा सम्बन्ध है अतः ईश्वर का जानना सम्पूर्ण प्रकृति को जानना है और मनुष्य के भाग्य को भी जानना है.
- फिर भी जगत् जो परमात्मा से उत्पन्न है का भी मूल्य है. अगस्टाइन ने प्लोटिनस की तरह जगत् की उपेक्षा न की. जगत् न तो विकास है न निर्गमन वरन् परमात्मा का सृजन है.
- ईश्वर ने जगत् को उत्पन्न करने के पहले पुदगल (जड़ तत्व) को आकार रहित उत्पन्न किया. पहले आकार तत्पश्चात् पुदगल उत्पन्न किया. यह उत्पत्ति न काल में न प्रसर में हुई, क्योंकि जगत् के पूर्व काल व प्रसर भी न थे.
- प्रसरातीत ईश्वर ने ही काल और प्रसर को उत्पन्न किया.
- सृष्टि नित्य नहीं है. इसका आदि (Beginning) है और यहाँ समस्त जीवधारी सीमित और परिवर्तनशील एवं नाशवान हैं.
- सृजन ईश्वर का स्वतंत्र कार्य है और संसार की वस्तुए ईश्वर का विस्तार व सातत्य नहीं है. ईश्वर ने नयी सृष्टि उत्पन्न की. पुदगल भी उसने उत्पन्न किया. केवल ईश्वर परमशुभ है पुदगल भी इसीलिए निरपेक्ष रूप में बुरा नहीं है.
- अगस्टाइन के अनुसार सृष्टि विकास में तात्कालिक कारणता नहीं है. अर्थात् माँ-बाप को पुत्र का कारण मानना भ्रान्ति है. ईश्वर ने समस्त प्रकृति की वस्तुओं के आकार निश्चित करके उनके बीज-सिद्धान्त (Seminal principles) बिखेर दिए. इसी से ईश्वर ने छः दिन में सृष्टि निर्मित कर दी.
- मानव अस्तित्व शरीर और आत्मा की विलक्षण इकाई है, शरीर हेय नहीं है और यह आत्मा से निर्देशित है.
- आत्मा उत्पन्न है या अनुत्पन्न या माता-पिता की आत्माओं से उद्भूत है—इस विषय में अगस्टाइन मौन है. परन्तु उसने आत्मा को आदि तो माना, परन्तु अन्त नहीं माना. आत्मा अमर है.
- आत्मा के लिए आनन्दमयी अवस्था आशापूर्ण आस्था है. इसमें आत्मा का ईश्वर में तादात्म्य हो जाता है.
- मानव-आत्मा का लक्ष्य प्राकृतिक जगत् से अप्राकृतिक जगत् की ओर बढ़ते हुए ईश्वर की प्राप्ति है जो ईश्वर-प्रेम समर्पण से संभव है.
- मनुष्य प्रेममय है. वह सांसारिक वस्तुओं से प्रेम करता ही है. यदि इस प्रेम की वस्तु को वह ईश्वर बना ले तो आनन्द का अधिकारी होगा.
- मनुष्य-आत्मा चयन म स्वतंत्र है. इसी स्वतन्त्रता के कारण आदि मानव (आदम) ने पाप किया और उस मूल पाप से समस्त मानव जाति आनुवंशिक क्रम में पाप से अभिशप्त है. ईश्वर-कृपा ही एक-मात्र उपाय है.
- संसार में बुराई का कारण मानव का अशुभ संकल्प और भलाई का कारण ईश्वर की कृपा है. फिर भी बुराई अच्छी नहीं है, लेकिन यह अच्छा है कि बुराई है—अगस्टाइन ने कहा था. बुराई विश्व-सौन्दर्य में वृद्धि करती है जैसे श्वेत साड़ी का काला बॉर्डर. बुराई भलाई के लिए एक अंकुश है.

ध्यानेय विन्दु

* *अगस्टाइन का ईश्वर नित्य सत्यों का व्यवस्थित रूप, भावमय (निर्गुण-निराकार नहीं), प्रेम स्वरूप, सृष्टि कर्ता और अद्वैत है.*
* *सृष्टि उसके शुभ संकल्प की अभिव्यक्ति है. सृष्टि की वस्तुएं उसकी प्रतिमाएं हैं. मानव भी उसकी प्रतिमा है.*
* *मानव आत्मा भी ईश्वर से उत्पन्न आदि तत्व है. इसमें निहित बुद्धि दिव्य प्रकाश की बाढ में अतीन्दिय जगत् में जाने की क्षमता रखती है.*
* *अगस्टाइन के ईश्वर-विचार में सर्वेश्वरवाद को और सृष्टि-विचार में निर्गमनवाद व विकासवाद तथा प्लेटो के द्वैतवाद को स्थान मिला.*
* *आत्मा स्वतंत्र होते हुए भी मूल पाप के कारण ईश्वर-कृपा के अधीन है. कृपा का नियतत्ववाद मानव की महत्ता को घटाता है और वैज्ञानिक प्रगति का विरोधी भी है. अतः निराशावाद व्याप्त हो गया.*
* *अगस्टाइन ने संसार को दैवी नाटक माना और ईश्वर को उसका सूत्रधार माना. इस प्रकार एक ओर उसने प्रयोजन देखा तो दूसरी ओर सामान्य मानव के सामने नैतिक जीवन जीने की बाध्यता भी प्रस्तुत की.*

परमात्मा, जगत् और आत्मा सेण्ट थॉमस एक्विनस (1225–1274 ई.)

- सेण्ट थॉमस एक्विनस ने धर्म और दर्शन तथा बुद्धि और आस्था को उचित स्थान देकर चर्च के अतिप्राकृतिकवाद एवं अरस्तू के प्राकृतिकवाद का समन्वय किया. गिल्सन के अनुसार उसने दर्शन के जल को ईश्वर-मीमांसा की शराब में बदल दिया.
- उसके अनुसार धार्मिक ज्ञान के तथ्य बुद्धि के विषय न होकर आस्था के विषय हैं, क्योंकि धर्म-ज्ञान ईश्वर से तथ्यों की ओर और दर्शन वस्तुओं और तथ्यों से ईश्वर की ओर चलता है.
- अतः त्रिरूपेश्वरवाद, अवतार, मूलपाप, समय के अन्तर्गत जगत् की उत्पत्ति आदि अलौकिक तथ्य आस्था मात्र के विषय हैं. फिर भी ये बुद्धि के परे तो हैं पर बुद्धि-विरुद्ध नहीं हैं.

इस विचार से असहमति प्रकट की कि विशेष (वस्तु) सामान्य की प्रतिलिपि है और आध्यात्मिक सामान्यों और पुदगल में द्वैत है.

- अरस्तू के अनुसार व्यष्टिगत द्रव्य असंख्य हैं. ये द्रव्य क्रमिक रूप में सर्वत्र है. परन्तु इनका निम्न छोर शुद्ध पुदगल (विचार रहित) और दूसरा छोर शुद्ध सामान्य (ईश्वर जो पुदगल रहित है) है. इनके बीच सभी प्रकार के सामान्य हैं और प्रत्येक प्रकार का सामान्य पुदगल व विचार के मिश्रण की इकाई है.
- अरस्तू के अनुसार सामान्य एकता का सिद्धान्त और पुदगल विशेषता एवं अद्वितीयता का सिद्धान्त है. पुदगल और विचार प्रत्येक वस्तु के अपृथक् पक्ष हैं.
- प्रत्येक वस्तु के लिए विचार और पुदगल की अपृथक्ता नित्य और शाश्वत है जिसमें पुदगल वस्तु में परिवर्तन की शर्त और विचार कारण है. विचार स्वयं में अपरिवर्तनशील है.
- अरस्तू के अनुसार विचार और पुदगल अपृथक् तो हैं, परन्तु भेदपरकीय हैं. यह भेद वस्तु-विकास-क्रम में शक्यता (Potentiality) और सिद्धता के स्तर हैं. शक्यता प्रथम तो सिद्धता द्वितीय स्तर है.
- बीज और वृक्ष में बीज शक्यता (Potentiality) और वृक्ष सिद्धता (Actuality) है. शक्यता द्रव्य का अविकसित रूप और सिद्धता द्रव्य का विकसित रूप है.
- यद्यपि सामान्य और विशेष और सिद्धता व शक्यता समानान्तर सिद्धान्त है फिर भी पुदगल (विशेष) शक्यता का सिद्धान्त और सामान्य सत्यता का सिद्धान्त है. विचार और पुदगल सर्वत्र सह अस्तित्वमय हैं.
- सामान्य पुदगल के माध्यम से अपना साक्षात्कार करता है. इसी सिद्धान्त के अनुसार ईश्वर (परम सामान्य) पुदगल (शक्यता) का अत्यन्त विकसित रूप है.
- अरस्तू ने सामान्यों को यथार्थ सत्ता कहते हुए उन्हें विशेषों से युक्त मानकर सृष्टि की वैज्ञानिक व विकासवादी व्याख्या का मार्ग प्रशस्त कर दिया.
- सामान्यों को मात्र संप्रत्यय सिद्ध करने का प्रयास दार्शनिक इतिहास में 12वीं शताब्दी में पीटर एबलॉर्ड ने किया.
- 11 वीं शताब्दी में सामान्यों के स्वरूप को लेकर यूरोप में बड़ा वाद-विवाद छिड़ा. रोसलिन नामक दार्शनिक ने कहा कि विशेष द्रव्यों की ही सत्ता है. ऐसी कोई सत्ता नहीं है जिसे ईश्वर कहा जाए. त्रिदेव का सामान्य विचार परमेश्वर एक नाममात्र है. हाँ त्रिदेव के विचार में तीन विशेष द्रव्य हैं या व्यक्तित्व हैं जो शक्ति में समान हैं.
- नामवाद वस्तुओं के संप्रत्ययों अथवा सामान्य विचारों की यथार्थ सत्ता का विरोध करता है साथ ही इन संप्रत्ययों को मात्र नाम मानता है.
- लॉक ने अपनी ज्ञान मीमांसा में स्पष्ट कहा था कि मानव केवल संवेदनाओं को जानता है वस्तु या विचारों के सम्बन्धों तक को नहीं जानता. ईश्वर का विचार भी मानव-मन में कैसे आया यह भी अज्ञेय है. अतः हमारा बहुत-सा संप्रत्ययात्मक ज्ञान मात्र नाम है.
- बर्कले ने लॉक के इसी तर्क को आगे बढ़ाकर कहा कि अनदेखी वस्तुओं की सत्ता मानने का अर्थ है कि मन अमूर्त विचार बना सकता है, परन्तु यह असंभव है.
- हम देखने के उपरान्त किसी वस्तु का विचार या उसकी कल्पना (प्रतिमा) बना सकते हैं. परन्तु ऐसे त्रिभुज का विचार जो एक साथ समत्रिबाहु, वर्ग, आयत हो नहीं बना सकते हैं.
- हम बिना पिण्ड के गति का विचार जो न तेज हो न मन्द न वक्रीय हो न क्षैतिज नहीं बना सकते हैं. अतः अमूर्त विचार से सम्बन्धित कोई सत्ता नहीं होती. केवल एक प्रकार की वस्तुओं का एक नाम होता है.
- बर्कले के अनुसार अनदेखे (मन के बिना) भौतिक जगत् की सत्ता ही कैसे सिद्ध है? संवेदनाओं के बिना ज्ञान असंभव है. फिर अमूर्त विचारों से सम्बन्धित सत्ताओं के होने का हमारे पास कोई आधार नहीं है. अतः अमूर्त विचार मात्र नाम हैं.
- भारतीय चिन्तन में वैशेषिक दर्शन (विशेष रूप से प्रशस्तवाद) ने सामान्यों की यथार्थ सत्ता मानी. सामान्य एक, नित्य और एक ही वर्ग के द्रव्यों, गुणों व कर्मों में निवास करता है.
- द्रव्य, गुण और कर्म के सामान्य होते हैं. एक समान्य दूसरे सामान्य में सत्ता नहीं रख सकता है. जैसे वृक्षत्व व घटत्व स्वयं अलग-अलग सामान्य हैं.
- सत्ता सर्वोच्च सामान्य है. इसका कोई सामान्य नहीं है. यह अपने में अन्य सतों को समाये हुए है. न्याय-वैशेषिक व पूर्व मीमांसा सामान्यों को विशेषों से पृथक्-पृथक् जगत् के मूल द्रव्य के रूप में वस्तुगत सत्ता, एक, नित्य और सर्वत्र मानते हैं :
- जैन सामान्य को अनेक रूपी, अनित्य, सीमित और एक ही वर्ग की वस्तुओं का सामान्य लक्षण मानते हैं.
- कणाद के अनुसार सामान्य और विशेष अपृथक् सम्बन्ध रखते हैं, परन्तु प्रशस्तवाद सामान्यों की सत्ता प्लेटो की तरह स्वतंत्र मानते हुए कहते हैं कि सामान्य सृष्टि उत्पत्ति के समय विशेषों में प्रवेश कर अस्थायी रूप से अपनी अभिव्यक्ति करते हैं.
- बौद्धों के अनुसार सामान्य विचार मात्र नाम है. इसकी वस्तुगत सत्ता नहीं है. यह प्रत्यक्ष का विषय नहीं है. सामान्य का विचार भूतकालीन अनुभवों पर आधारित है. इसे वस्तुगत सत्ता मानना भ्रामक है.
- न्याय-वैशेषिक सामान्य को प्रत्यक्ष का विषय मानते हैं. सामान्य वस्तु का स्वरूप है. विशेष उसका लक्षण है. सामान्य एक ही प्रकार की अनेक वस्तुओं में निवास करता है, जबकि विशेष का ज्ञान उस वस्तु की दूसरे प्रकार की वस्तु से भेद करने पर होता है.
- संप्रत्ययवादी सामान्यों की सत्ता मानव-मन में मानते हैं, नामवादी इन सामान्यों को मात्र नाम मानते हैं. यथार्थवादी सामान्यों की स्वतंत्र व यथार्थ सत्ता मानते हैं.

ज्ञान के आधार
(Means of Knowledge)
(चार्वाक–ज्ञान मीमांसा)
(Epistemology)

- चार्वाकों का भौतिकतावादी दर्शन उनकी ज्ञान-मीमांसा पर आधारित है.
- सामान्यतः भारतीय दर्शन ने प्रत्यक्ष, अनुमान, शब्द प्रमाण (आप्त पुरुषों या वेदादि सद्ग्रन्थों के वचन) तुलना (उपमान) आदि को ज्ञान का साधन माना है.
- चार्वाक ने केवल प्रत्यक्ष को ज्ञान का साधन माना और अनुमानात्मक ज्ञान का भी खण्डन किया. उनके अनुसार धुएं को पर्वत पर देखने से वहाँ आग होने का अनुमान सन्देह से परे नहीं है जब तक यह सिद्ध न हो जाए कि धुएं के सभी उदाहरण आग के ही उदाहरण होते हैं.
- हम न तो संसार में धुएं के सभी उदाहरण आग के उदाहरण होना देख सकते हैं न भूतकाल में ये देखे गए और न भविष्य में यह संभव है. अतः व्याप्ति सम्बन्ध (जहाँ धुआँ है वहाँ आग है) पूर्ण रूप से सिद्ध नहीं है.
- धुएं और आग का सार्वभौम अटूट सम्बन्ध किसी विश्वसनीय व्यक्ति के कथन पर भी अमान्य है, क्योंकि इसकी वैधता अनुमान से ही सिद्ध करनी पड़ेगी कि यह व्यक्ति विश्वसनीय है.
- धूम्रत्व और अग्नित्व के सामान्यों के आधार पर भी यह सिद्ध नहीं होता है कि धुएं के सभी उदाहरण निश्चित रूप से आग के ही उदाहरण होते हैं, क्योंकि ऐसे देखे हुए उदाहरणों से अनदेखे उदाहरणों में व्याप्ति सम्बन्ध मानना अतार्किक है.

- स्पिनोजा ईश्वर को स्वयभू, स्वनियत (Self-determined) मानते हुए यह भी कहता है कि उसका संकल्प दैवी सनक की तरह है अतः उसे बुद्धिमान या शुभ कहना भी अतार्किक है.
- ईश्वर की सर्वशक्तिमानता और स्वतंत्रता इसी में अक्षुण रह सकती है कि वह जो चाहे सो करे अर्थात् संकल्पमय द्रव्य (Willing being) हो. उसको विवेकशील कहना उसे बन्धन में डालना है.
- ईश्वर की असीमता का अर्थ, स्वजातीय असीमता नहीं है, क्योंकि उसके सारतत्व में समस्त अभिव्यक्ति के असख्य गुण निहित हैं.
- ईश्वर में अनन्त गुण हैं का आशय यह है कि मानव बुद्धि उसमें (असीम द्रव्य में) असीम रूपों को देखने को विवश है.
- इस ईश्वर में असीम विचार और असीम विस्तार के ही दो गुण नहीं हैं वरन् विचार और विस्तार अनन्त प्रकारों में अभिव्यक्त होकर पर्याय बन जाते हैं. समस्त जगत् ईश्वर के गुणों का पर्याय है.
- वस्तुतः ईश्वर असीम विचार व असीम विस्तार स्वयं है. सर्वत्र आत्मा व पुदगल (विचार व विस्तार) साथ-साथ हैं. फिर भी ये दोनों गुण केवल अपनी-अपनी सजातीयता के कारण निरपेक्ष हैं.
- चूँकि विचार और विस्तार एक-दूसरे के कारण नहीं हैं और ईश्वर पर आधारित हैं अतः ये सापेक्ष हैं.
- समस्त सृष्टि ईश्वर द्रव्य से ऐसे ही निगमित है जिस प्रकार ज्यामिति में एक निष्कर्ष से दूसरा निष्कर्ष निगमित होता है.
- सृष्टि में कोई प्रयोजन नहीं है. विश्व-प्रक्रिया में प्रत्येक कार्य पिछले कारण या कार्य का परिणाम है. समस्त सृष्टि कारण-शृंखला है.
- सर्वत्र नियतत्ववाद (Determinism) है. विश्व की समस्त घटनाएं जिस संभव ढंग से घट सकती हैं, उसी ढंग से घटती हैं. यह कुछ भी न तो अक्रमिक है न संयोगवश ही है.
- प्रत्येक सीमित विचार या सीमित पिण्ड परम द्रव्य से अपरोक्ष रूप से (Directly) प्रसूत नहीं है फिर भी परम द्रव्य का उनमें अभाव नहीं है. इसीलिये बुद्धि पर्यायों (नाशवान वस्तुओं) की संख्या, आकार, आकृति आदि के कारणों को निगमित नहीं कर पाती है जैसे त्रिभुज की परिभाषा से त्रिभुजों की संख्या, आकृति आदि निगमित नहीं हो सकते हैं.
- समस्त जगत् ईश्वर स्वयं में निहित आवश्यकता का परिणाम है. समस्त प्रकृति मूल द्रव्य से नियंत्रित है. सृष्टि वैसी ही है जैसी उसे होना था.
- मानव आत्मा या मनस विचारों का नाम है जो शारीरिक प्रतिक्रियाओं को प्रतिबिम्बित करता रहता है. इस आत्मा में ज्ञान, भाव, संकल्प व संयोग की अलग-अलग क्षमताएं नहीं हैं.
- संकल्प वस्तु प्रत्यक्ष की स्वीकृति या अस्वीकृति का विचार है जो बुद्धि से तादात्म्य रखता है. अनेक भावावेश व संवेग निरपेक्ष सत्तायें नहीं हैं. ये केवल स्थितियों के नाममात्र हैं.
- संवेग निष्क्रिय व सक्रिय होते हैं. जो प्राणशक्ति की वृद्धि करते है वे सक्रिय हैं जैसे विवेकपूर्ण स्वप्रेम और परोपकार. प्राणशक्ति को घटाने वाले संवेग निष्क्रिय हैं जैसे घृणा, क्रोध, ईर्ष्या, तरस आदि.
- संवेगों का प्रादुर्भाव आत्म-संरक्षण और वृत्तियों से होता है. इनमें से प्रथम के संवेग अधिक आवश्यक हैं.
- संवेग स्वयं में दोष नहीं हैं. सम्पूर्ण प्रकृति दोषहीन है. फिर भी निष्क्रिय संवेग अज्ञान के परिणाम हैं.
- इच्छा मनुष्य का वास्तविक सारतत्व है. यह एक चेतन क्षुधा है और इससे ही सुख-दुःख प्राप्त होते हैं. ये दोनों ही क्रियाएं हैं. मानव का लक्ष्य सुख-दुःख से परे जाकर ईश्वर से ज्ञानगत प्रेम करना है और ज्ञान यह है कि सब कुछ ईश्वर पर आधारित है.

विशिष्ट बिन्दु

* *स्पिनोजा-दर्शन में ईश्वर ही प्रकृति और प्रकृति ही ईश्वर है. विचार और विस्तार सर्वत्र तादात्म्य या समरस रूप में स्थित हैं.*
* *इसके विचारों में अध्यात्मवाद व भौतिकवाद का द्वैत समाप्त हो जाता है और तटस्थ एकत्ववाद की स्थापना हो जाती है.*
* *सर्वत्र आवश्यकता का नियम है. सब कुछ पूर्व से ही नियत है. सृष्टि में जैविकीय विकास न होकर गणितीय विकास है.*
* *सृष्टि में प्रयोजन देखना भूल है. इन्द्रियों द्वारा अनेकत्व देखना सत्य है, परन्तु प्रज्ञा के लिए केवल ईश्वर ही एक है व यही सत्य है.*
* *मनुष्य के सकल्प पूर्व नियत है, वह स्वतंत्र नहीं है. समस्त प्रकृति पूर्व नियंत्रित है. स्वचेतना के कारण मनुष्य अपने को स्वतंत्र समझता है.*
* *ईश्वर भी स्वतंत्र नही है, क्योंकि उसे अपनी आवश्यकता के अनुसार ही ऐसा विश्व उत्पन्न करना था. वह इसलिये स्वतंत्र है कि वह बाह्य कारण से प्रभावित नहीं हुआ.*
* *मानव में ज्ञानोदय की वृद्धि की मात्रा ही उसकी स्वतंत्रता की मात्रा है.*

स्पिनोजा–पदार्थ और मन (Matter and Mind)

- स्पिनोजा का परम द्रव्य ईश्वर है. उसमें अनन्त गुण हैं, परन्तु विचार व विस्तार विशेष रूप से बोधगम्य हैं. वैसे ब्रह्माण्डीय स्तर पर ईश्वर व प्रकृति समानार्थी हैं और इनके मध्य सम्बन्ध ढूँढने की जरूरत नहीं है.
- मानव शरीर में शरीर और मन समानान्तर सामकालीन व सहअस्तित्व रूप हैं. ये दोनों परम द्रव्य की अभिव्यक्तियाँ हैं और सापेक्ष हैं. फिर भी स्वरूप में दोनों एक-दूसरे के विरोधी हैं.
- मनस की व्याख्या भौतिक तथ्यों और शरीर की व्याख्या मानसिक तथ्यों से नहीं हो सकती है. दोनों में कोई एक-दूसरे का कारण नहीं है और न कोई एक-दूसरे को प्रभावित कर सकता है.
- मनस मानसिक तथ्य और शरीर शारीरिक तथ्य ही उत्पन्न कर सकता है. परम द्रव्य अविभाज्य है. वही एक ओर शरीर तो दूसरी ओर मनस है.
- मन और शरीर में समानान्तरवाद है. मनुष्य ईश्वर का सूक्ष्म रूप है विस्तार की दृष्टि से वह शरीर और विचार की दृष्टि से वह मनस है.
- संकल्प, भाव और विचारों से संयुक्त मनस एक जटिल पर्याय है, परन्तु इन्हें सन्निहित करने वाला आत्मा जैसा कोई आध्यात्मिक द्रव्य नहीं है. न ही ये शारीरिक प्रक्रियाओं के प्रभाव हैं.
- मनस और शरीर के कार्यों और भावावेशों में एक क्रमिक संपात (Coincidence) है, अतः शरीर में परिवर्तन के साथ मन में परिवर्तन और मन में परिवर्तन के साथ शरीर में परिवर्तन संभव है.
- स्पिनोजा के अनुसार वस्तु जगत् की क्रमिक व्यवस्था से संवाद रखने वाली एक एकीकृत विचारों की भी व्यवस्था है. अतः मन और शरीर में घटने वाली घटनायें समानान्तर रूप में घटती हैं.
- यह व्यवस्था वैसी ही है जैसे एक पेन्सिल में लाल व हरे दो लेड पड़े हों और उनसे एक रेखा खींची जाए जो वह सर्वत्र लाल व हरी होगी और समान रूप से सीधी, टेढ़ी या तिरछी होगी.
- अतः यह कहना भ्रामक है कि मनस शरीर को जानता है. अतः मनस द्वारा समस्त प्रत्यक्ष ज्ञान अस्पष्ट ज्ञान है. कारण यह है कि प्रत्येक मनस ईश्वर का अंश होने के कारण प्राकृतिक घटनाएं जैसे पूर्व नियत हैं उसी भाँति वह भी पूर्व नियत है.
- स्पिनोजा क्षमता-सिद्धान्त का विरोधी है. ज्ञान, भाव और संकल्प के तात्विक भेद मन में नहीं हैं.

डेकार्ट–पदार्थ (शरीर) और मन

- शरीर और मन के बीच सम्बन्ध को डेकार्ट ने अन्तर्क्रियावाद कहा, परन्तु स्पिनोजा के अनुसार यह समानान्तरवाद या प्रसंगवाद है
- डेकार्ट के अनुसार मनस व शरीर स्वतंत्र व एक-दूसरे के विरोधी द्रव्य हैं. शरीर चिन्तन नहीं कर सकता है और मनस अविस्तारी है. मन सक्रिय और शरीर निष्क्रिय है. मनस व शरीर एक-दूसरे के कारण नहीं हैं.
- डेकार्ट के अनुसार मनस की क्षमताएं पर्याय हैं. पर्यायों के बिना भी मनस है, 'मैं' है, परन्तु मनस के बिना पर्याय नहीं रह सकते.
- मन में, विचार में या 'मैं' में वह सब कुछ है जिसे चेतना कहा जाता है. इसे प्रकृति की व्यवस्था बाधा नहीं पहुँचा सकती है.
- डेकार्ट समस्त अवयवी जगत् (मानव शरीर, पशु व पक्षी) को प्रकृति के अन्तर्गत और यान्त्रिक मानता है. रक्त संचालन के अतिरिक्त मानव-शरीर या पशु में आत्मा या प्राण का दखल नहीं है.
- फिर भी मनस शरीर को व शरीर मनस को विचलित कर सकते हैं, और केवल इसलिए कि मानव शरीर एक संहति है अन्यथा मनस (आत्मा) और शरीर पृथक् द्रव्य हैं. पीनियल ग्रन्थि में स्थित आत्मा परोक्ष रूप से शरीर को प्रभावित करती है. अतः शरीर-मन के मध्य अन्तर्क्रिया का सम्बन्ध सिद्ध हो जाता है.
- भावावेशों के कारण शारीरिक होते हैं, परन्तु आत्मा परोक्ष रूप से इन्हें अपने संकल्प से प्रभावित कर सकता है.
- डेकार्ट के अनुसार छः मुख्य भावावेश—आश्चर्य, प्रेम, घृणा, इच्छा, प्रसन्नता और दुःख—होते हैं. कुछ जन्मजात विचार होते हैं.

लाइबनिज–पदार्थ और मन

- लाइबनिज ने द्रव्य की परिभाषा करते हुए कहा कि यह ऐसा सत है जो कार्यशक्ति रखता हो और साथ ही सरल या संयुक्त हो.
- लाइबनिज ने चिद्‌णुओं (चेतना परमाणुओं) को शक्ति का केन्द्र मानकर कहा कि यह चेतन शक्ति सरल, अविभाज्य, अभौतिक व अविस्तारी है.
- सर्वत्र अनेक प्रकार के असंख्य शक्ति केन्द्र हैं जो तात्विक और सत्य हैं और इन्हीं से सृष्टि का निर्माण हुआ है. ये अनादि, अनन्त व अविनाशी हैं. केवल यौगिक चिद्‌णुओं का आदि व अन्त होता है.
- चिद्‌णु परिवर्तनहीन हैं. ये आध्यात्मिक शक्तिकेन्द्र अपने में संवेदना, भाव, संकल्प, क्षुधावृत्ति व प्रत्यक्षीकरण आदि सब कुछ छिपाये हुए हैं जो जड़, वनस्पति, पशु, मानव जगत् के लिए आवश्यक हैं.
- समस्त सत्ता एक आध्यात्मिक जीवन है. सृष्टि में भेद का कारण इन चिद्‌णुओं में प्रत्यक्षीकरण की मात्रा का कम या ज्यादा होना है. अतः मनस या आत्मा वह चिद्‌णु है जहाँ प्रत्यक्ष स्पष्ट है और पत्थर वह चिद्‌णु है जहाँ स्पष्टता नहीं है. यह अचेतन मनस है.
- प्रत्येक चिद्‌णु समस्त विश्व का प्रतिबिम्ब करता है. इसमें गवाच्छ् (Window) नहीं है. इस प्रकार भौतिक और मनोवैज्ञानिक तथ्यों में तारतम्यता है. विस्तार व विचार में तादात्म्य है. प्रत्येक चिद्‌णु विश्व का दर्पण या प्रतिनिधान है.
- प्रत्येक चिद्‌णु एक लघु ब्रह्माण्ड है जो आध्यात्मिक है. प्रत्यक्षण की स्पष्टता की न्यूनाधिक मात्रा के कारण मानव जड़, वनस्पति, पशु, मानव आदि की संज्ञाएं यौगिक चिद्‌णुओं को देता है. प्रकृति में आत्मा रहित पुदगल नहीं है. सर्वत्र एक ही आध्यात्मिक सत्ता है.
- मानव-आत्मा भी एक चिद्‌णु है जिसको 'चिद्‌णुओं की रानी' कहते हैं. यह ईश्वर की अनुकृति ही है. मनुष्य लघु ईश्वर है.
- ईश्वर सर्वत्र ओत-प्रोत होते हुए भी अशरीरी, सार्वभौम, स्वतंत्र, असीम द्रव्य है और समस्त संभवन का आधार है. वह पूर्ण है. वह सर्वज्ञ, परम शुभ, सर्व-शक्तिमान है. वह मानव बुद्धि से परे (अति बौद्धिक) है.
- मानव-चयन-क्रिया में स्वतंत्र है, परन्तु स्वतंत्रता उसके प्रत्यक्षीकरण की स्पष्टता की मात्रा पर न्यूनाधिक हो सकती है. वैसे मानव में कुछ सत्य या नैतिक सिद्धान्त जन्मजात रूप से विद्यमान होते हैं.
- लाइबनिज द्वारा प्रतिपादित सृष्टि में बहुत्ववाद, प्रयोजनवाद, अध्यात्मवाद आदि का पोषण व द्वैतवाद, यन्त्रवाद का विरोध है.
- मानव मनस कोरी पटिया नहीं है. इसमें समस्त विचारों के प्रारूप प्रागनुभविक रूप से विद्यमान हैं. परन्तु इन्हें अनुभव जाग्रत करता है.
- मानव-मनस और शरीर में न समानान्तर-वाद (स्पिनोजा) है न अन्तर्क्रियावाद (डेकार्ट) है वरन् ईश्वर द्वारा पूर्व स्थापित सामंजस्य है.
- शरीर एक दैवी यन्त्र है. ईश्वर ने इसके निर्माण में यह ध्यान रखा कि कब आत्मा को ऊष्मा की आवश्यकता होगी और कब हाथ उठाने की आवश्यकता होगी. शरीर आत्मा के प्रयोजन का साधन है.
- आत्माएं सक्रिय द्रव्य हैं अतः शरीर के निष्क्रिय चिद्‌णुओं पर प्रभावी होते हैं और शरीर में परिवर्तन के कारण हैं.
- वस्तुतः शरीर-निर्माता चिद्‌णु आत्मा के ज्ञान का तात्कालिक व अपरोक्ष विषय वस्तुएं हैं. ईश्वर ने दोनों के मध्य ऐसा सामंजस्य पहले से ही स्थापित कर दिया है कि शरीर वही तत्काल करता है जो आत्मा चाहती है.
- लाइबनिज का विश्व जड़ (पुदगल) विहीन आध्यात्मिक शक्तियों का खेल है जिसका नियन्त्रक परम आध्यात्मिक द्रव्य ईश्वर है और सर्वत्र व्याप्त है.

परमात्मा, आत्मा व संसार (न्याय-वैशेषिक, शंकराचार्य व रामानुजाचार्य)

- प्रारम्भिक न्याय सूत्र में ईश्वर का उल्लेख प्रसंगवश हुआ है, क्योंकि अणुओं को गति देने वाला सिद्धान्त 'अदृष्ट' को माना गया जो जड़ है.
- कालान्तर में नैयायिकों ने ईश्वर को सर्वज्ञ, सर्वव्यापी व सर्वशक्तिमान सृष्टि का कारण माना. यह ईश्वर सृष्टि का नियमनकर्ता व परावर्ती है.
- परमात्मा व्यक्तिगत है और सत्‌चित, आनन्द है. इसमें अधर्म, मिथ्याज्ञान, और प्रमाद नहीं है. यह पितृवत् प्राणियों की देख-रेख करता है व नित्य बोध स्वरूप है. उसने सृष्टि का सृजन करुणा के कारण किया है.
- सृष्टि का निर्माण अणुओं से परमात्मा ने 'अदृष्ट' (पूर्वकर्म फलों) के अनुसार किया और स्वयं उसकी इच्छा से सृष्टि की उत्पत्ति व विनाश होता है. वह सृष्टि के परे रहता हुआ जीवों के कर्मों का फलदाता है.
- ईश्वर ने अणुओं को उत्पन्न नहीं किया केवल व्यवस्थित किया. इस दृष्टि से ईश्वर और अणु दो सत्तायें हैं. न्याय के ईश्वर-विचार में तार्किक दोषों की आलोचना हुई है.
- न्याय वैशेषिक दोनों ही सृष्टि की परमाणुवादी व्याख्या करते हैं.
- वैशेषिक ने भी ईश्वर को सृष्टि का निमित्त कारण ही माना. न्याय-वैशेषिक दोनों ही ने वेदों का रचयिता प्रज्ञावान ऋषियों को माना हालांकि किन्हीं विद्वानों ने एक नित्य बोधमय निर्दोषमय पुरुष को वेद-वाणी का प्रमुख माना.
- यह ईश्वर अशरीरी है. शिथिल अर्थों में अणुओं को इसका शरीर भी माना गया.

- न्याय वैशेषिक दोनों ही शैव हैं, अतः महेश्वर या पशुपति महादेव ईश्वर है.
- मानव आत्मा एक द्रव्य है. सुख, दुःख, इच्छा, द्वेष, ज्ञान और संकल्प इसके गुण हैं. आत्मा चेतना नहीं है. चेतना इसका गुण है जो मन बुद्धि इन्द्रियों के बाह्य जगत से संसर्ग के कारण आत्मा में उत्पन्न होता रहता है. चेतना केवल आत्मा का ही गुण है. न्याय वैशेषिक की यही मान्यता है.
- चेतना शरीर, इन्द्रियों, मन बुद्धि आदि में से किसी का गुण नहीं है. यह केवल आत्मा का ही गुण है.
- आत्मा भी शरीर इन्द्रियों बुद्धि आदि से सर्वथा भिन्न द्रव्य है. यह सभी का नियन्त्रक एवं एकता स्थापित करने वाला सिद्धान्त है.
- आत्मा स्वयं में शाश्वत द्रव्य है. यह स्वयं में ज्ञान भी नहीं है. यह ज्ञान का आधार है और इसके द्वारा उपलब्ध सभी ज्ञान भी क्षणिक हैं.
- चेतना जो आत्मा का गुण है, भी प्रवाहमयी धारा के समान क्षणिक है. एक मानसिक अवस्था के पश्चात् दूसरी मानसिक अवस्था पीछा करती है.
- आत्मा मात्र सभी सुख-दुःखों का सर्वत्र द्रष्टा, भोक्ता और ज्ञाता (सर्वानुभावी) है. यह अजन्मा, अविनाशी, अखण्ड और सर्वव्यापी है.
- असंख्य आत्माएं हैं और प्रत्येक व्यक्ति का जीवात्मा अनोखा है. प्रत्येक जीवात्मा अपने कर्मानुसार अपने माता-पिता के कर्मों के उपयुक्त नया शरीर धारण करता है ताकि दोनों ही अपने कर्मों का फल भोग सकें.
- आत्मा का अस्तित्व पूर्व में था और भविष्य में भी रहेगा, जब तक व्यक्ति सद्कर्मों, ज्ञान, ध्यान आदि से मोक्ष प्राप्त न करे, मोक्षावस्था में भी आत्मा चेतनाविहीन व दुःखरहित हो जाती है. यह आनन्दावस्था है, यह क्रियाविहीन शान्तावस्था है. यह समस्त बन्धनों से मुक्तावस्था है.
- कुछ विचारक मुक्तावस्था को सुषुप्तावस्था के समान परमशान्त मानते हैं और आनन्दावस्था का निषेध करते हैं. वैशेषिक मुक्तावस्था को परमशान्तावस्था ही मानते हैं.
- न्याय-वैशेषिक के अनुसार आत्मा के उपर्युक्त विवेचन (विशेष रूप से मूल आत्मा का जड़त्व द्रव्य होना और मोक्ष का भी चेतनाविहीन होना) की बहुत आलोचना हुई है. यह मोक्ष मृत्यु की शान्ति के समान कहा गया और त्याज्य हुआ.
- आत्माएं दो हैं—जीवात्मा और परमात्मा. दोनों समान तो हैं पर तादात्म्य रूप नहीं हैं.
- शंकराचार्य के अनुसार एक ही अखण्ड, अजन्मा, अविनाशी आदि सार्वभौम चेतना है जिसे आत्मा या ब्रह्म कहते हैं, यह सत्य, असत्य, शुभ, अशुभ आदि द्वैतों से परे एक स्वयंसिद्ध व अनिर्वचनीय तत्व है.
- आत्मा को विचारादि से जाना नहीं जा सकता है. यह स्वयं समस्त वस्तुगत ज्ञान का आधार है. आत्मा इसी रूप में ज्ञेय है कि यह अनात्म (भौतिक वस्तु) नहीं है और अज्ञेय इसलिए है कि 'यह क्या है' मानव नहीं जान सका.
- आत्मा शरीर, मन, बुद्धि, प्रसार, काल, द्रव्य, गुण, भावना आदि कुछ नहीं है. यह विचार में आने वाली कोई वस्तु नहीं है. यह परम चेतना या अभेदमूलक चेतना (निर्विशेषचिन्मात्रम) है और मानव-चेतना से भिन्न है.
- यह विशुद्ध चैतन्य या अभिज्ञा है, ज्ञाता ज्ञेय और ज्ञान के भेद से रहित असीम, अतीन्द्रिय और परम ज्ञान का सार है, यह बोध स्वरूप है.
- यह सत एवं आनन्द रूप, निष्क्रिय, अखण्ड विराटता, शक्तिवानता एवं समस्त द्वैतों से परे है. यह न वैयक्तिक है न असंख्य आत्माओं का पुंज है. यह विलक्षण अवस्तुता (Nothingness) है,.
- यही आत्मा सर्वत्र है. हमारा जीवन, चिन्तन और अनुभव संभव इसीलिए हैं, क्योंकि सार्वभौम आत्मा के साथ हमारी अंशभागिता हैं.
- जीवात्मा (व्यक्तिगत आत्मा) मूलतः आत्मा ही है, परन्तु शरीर की सीमा में सीमित एवं इन्द्रियादि के व्यापारों से अनुबन्धित होने के कारण वह सक्रिय है.
- तात्विक आत्मा मात्र है, परन्तु अनुभवात्मक आत्मा मनोवैज्ञानिक आत्मा है जो समस्त वस्तुगत ज्ञान, भाव, संकल्प, स्मृतियों का आलय है, वस्तुतः जीवात्मा कर्ता है या अविद्या से युक्त आत्मा ही है.
- शंकर के अनुसार जीवात्मा ही अन्तःकरण चतुष्टय (मन, बुद्धि, अहंकार और चित्त) के रूप में कार्यशील रहती है. शरीर त्याग के समय यह सूक्ष्म शरीर एवं कारण शरीर के साथ दूसरा शरीर धारण करती है.
- सूक्ष्म शरीर पाँच ज्ञानेन्द्रियों, पाँच कर्मेन्द्रियों, पाँच प्राणों, मन और बुद्धि के सत्रह तत्वों से निर्मित होता है और नष्ट नहीं होता है जब तक व्यक्ति मोक्ष प्राप्त न कर ले, कारण शरीर जो कर्मफलों का आलय है भी जीवात्मा के साथ आगामी जन्मों में रहता है.
- शंकर की मान्यता के अनुसार जीवात्मा एक ही साथ ज्ञाता-ज्ञेय, आत्मा-अनात्मा तथा सत-आभास है. मोक्ष में इसका विलय आत्मा या ब्रह्म में हो जाता है.
- जीवात्माएं शरीर की भिन्नता के कारण अनेक हैं. आत्मा एक है जैसे सूर्य का प्रकाश पृथक्-पृथक् घटों में भिन्न लगता है, उसी प्रकार एक ही आत्मा भिन्न-भिन्न शरीरों में भिन्न प्रतीत होती है.
- जीवात्मा मानव शरीर में सर्वत्र व्याप्त रहती है. शरीर में इसकी चार अवस्थाएं—जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति और तुरीय—होती हैं. जाग्रत में पूर्ण शरीर क्रियाशील, स्वप्न में केवल मन क्रियाशील, सुषुप्ति में पूर्ण शान्ति (अस्थायी ब्रह्माकार वृत्ति) और तुरीयावस्था समाधि है जिसमें जीव-ब्रह्म एक हो जाते हैं.
- रामानुजाचार्य जीवात्मा को ईश्वर का अंश मानते हैं. यह सत, नित्य, यौगमय आत्म-चेतन, अखण्ड, अपरिवर्तनशील अदृश्य एवं आणुविक है, क्योंकि यह मनुष्य की हृदय-गुफा में निवास करती है.
- यह विलक्षण आत्मा शरीर इन्द्रियादि से भिन्न, समस्त अवयवी शरीर का प्रकाशक कर्ता और भोक्ता है. इसका मूल स्वरूप ईश्वरवत ही रहता है, परन्तु अविद्या के कारण यह संसारी बन अपने स्वभाव को भूल जाता है.
- जीवात्माएं अनेक हैं और मोक्षावस्था में भी ये सत रहती हैं. कर्मानुसार ये पुनर्जन्म धारण करती रहती हैं. जीवात्मा का सार भूत लक्षण अहंबुद्धि है.
- जीवात्मा ईश्वर का ही विशेषण या पर्याय है फिर भी इसके आणुविक आकार और इसकी सृजन की अक्षमता के कारण यह ईश्वरवर्त नहीं हो सकता है. मुक्ति में भी सालोक्य, सामीप्य, सारूप्य या सायुज्ज रूप इसे प्राप्त होता है.
- रामानुज के अनुसार जीव तीन प्रकार के—नित्य, मुक्त, बद्ध होते हैं.
- संसार में विचरण करने वाली आत्माओं में अलौकिक (अतिमानवीय), मानवीय, पाश्विक एवं वानस्पतिक चार प्रकार की होती हैं. ये प्रकार शरीरों के कारण होते हैं यद्यपि स्वरूप में ये समान होती हैं. आत्माएं स्वयं में ब्राह्मण, शूद्र, नर या नारी नहीं होती हैं.
- शंकर के अनुसार परमात्मा (ब्रह्म) सार्वभौम चेतना, समस्त द्वैतों से परे एक अखण्ड, निर्गुण-निराकार तत्व है जो सर्वथा अचिन्त्यनीय है.
- यही ब्रह्म तर्क की दृष्टि में ईश्वर कहलाता है. ईश्वर सर्वज्ञ, सर्वशक्तिवान, सर्वव्यापी, सृष्टा, जगत्-नियन्ता, जीवों का कर्म-फलदाता सगुण ब्रह्म कहलाता है.
- ईश्वर समस्त जगत् का उपादान व निमित्त कारण है. वह माया (शक्ति) से विभूषित होने के कारण सृष्टि उत्पन्न करता है. वह सृष्टि में व्याप्त और सृष्टि

से परे है और मानव में भी अन्तर्यामी रूप से स्थित है.

विशेष बिन्दु

* *शंकर का जीवात्मा मुक्तावस्था में अपना अस्तित्व ब्रह्म में विलीन कर देता है, परन्तु रामानुज का आत्मा तब भी अपना अस्तित्व बनाए रखता है.*
* *शंकर मुक्ति का साधन ज्ञान और रामानुज सत्कर्म व भक्ति मानते हैं. शंकर का जीवात्मा परम आत्मा का आभास या प्रतिबिम्ब पर रामानुज का आत्मा ईश्वर का अंश है.*
* *अविद्या या अज्ञान को दोनों ही बन्धन का कारण मानते हैं.*
* *दोनों ही कर्म नियम और पुनर्जन्म को स्वीकार करते हैं.*
* *शंकर में वास्तविक आत्मा ज्ञान स्वरूप है. रामानुज में वह ज्ञान और ज्ञाता भी है अर्थात् परम आत्मा अपने को भी जानता (Self-conscious) है.*
* *शंकर में जीव अनेक हैं आत्मा एक है. रामानुज में मूल आत्माएं ही अनेक हैं और अज्ञान के कारण शरीर में अनेक जीवात्माएं कहलाती हैं.*

- शंकर के अनुसार ईश्वर स्वयंसिद्ध सत्य है. वह प्रमाणों का विषय नहीं है. उसके अस्तित्व के लिए श्रुति ही प्रमाण है.
- समस्त सृष्टि (ब्रह्मा से लेकर तृण तक) उसका शरीर है. ईश्वर और जगत्, कारण और कार्य तादात्म्यमय है. फिर भी ईश्वर जगत् से परे है.
- शंकर में निर्गुण-निराकार ब्रह्म परम सत्ता है, और यही सत है. ईश्वर तो व्यावहारिक सत्य है अतः प्रपंच जगत् की परमोच्च सत्ता है.
- रामानुज में ईश्वर (सगुण ब्रह्म) ही परम सत है. उन्हें निर्गुण-निराकार ब्रह्म अमान्य है, क्योंकि गुण-पूर्ण कार्य (जगत्) निर्गुण ब्रह्म उत्पन्न नहीं कर सकता है.
- रामानुज का ईश्वर सत, चिद्, आनन्द के साथ अनन्त गुणों का भण्डार, अनेकता में एकता विशेष है और समस्त भेद (पुदगलीय विश्व व जीवात्माएं) उसके विशेषण हैं या सम्पूर्ण जगत् उसका शरीर है.
- जीवात्माएं (भोक्ता) पुदगल (भोग्य) और ईश्वर स्वभाव भेद के कारण तीन हैं, परन्तु ये भेद आन्तरिक (स्वगत) हैं. तीनों अपृथक् रूप से एक हैं.
- रामानुज का सगुण ब्रह्म और शंकर का ईश्वर लगभग एक-सा है. रामानुज के ईश्वर में माया शक्ति का विरोध है.
- पारमार्थिक दृष्टि से शंकर सर्वत्र एक ही सत्ता ब्रह्म को देखते हैं–(सर्वम्खलु इदमब्रह्म) उन्हें भेद (सजातीय, विजातीय व स्वगत तक) मान्य नहीं. रामानुज स्वगत भेद स्वीकार करते हैं पर पार्थक्य नहीं मानते हैं.
- दोनों ही संसार की उत्पत्ति पंच महाभूतों से मानते हैं. पर शंकर के लिए संसार पारमार्थिक दृष्टि से विलक्षण ब्रह्म का अनिर्वचनीय आभास है. रामानुज के लिए जगत् सत है. व्यावहारिक दृष्टि से शंकर भी इसे सत मानते हैं.
- शंकर और रामानुज आत्मा, परमात्मा और जगत् में अपार्थक्य देखते हैं. रामानुज भेद को ईश्वर का आन्तरिक भेद मानकर उसे सत कहते हैं पर शंकर भेद को आभास मानते हैं. इसीलिए शंकर का दर्शन अद्वैतवादी और रामानुज का दर्शन विशिष्टाद्वैतवादी कहलाया.

सामान्य (Universal) (प्लेटो, अरस्तू, बर्कले, न्याय वैशेषिक व बौद्ध)

- पश्चिमी दर्शन में सर्वप्रथम सुकरात ने कहा था कि विचारों द्वारा निर्मित संप्रत्यय या सामान्य विचार ही वास्तविक ज्ञान है. उदाहरण के लिए जब तक हम यह नहीं जानते कि सौन्दर्य या न्याय क्या है तब तक यह कैसे बताया जा सकता है कि अमुक वस्तु सुन्दर है या नहीं या अमुक व्यक्ति न्यायपूर्ण है या नहीं?
- सामान्य (Universal) किसी वस्तु का वह विचार होता है जो उस वस्तु के पूरे वर्ग में पाया जाए जैसे—मनुष्य जाति में मनुष्यत्व का विचार एक सामान्य है. इसी प्रकार अश्वत्व, गोत्व, नारीत्व आदि के विचार हैं. अश्वत्व का सामान्य विचार प्रत्येक अश्व में पाया जाता है, लेकिन उसका विशेषत्व इस बात में है कि घोड़ा, छोटा, बड़ा, काला, भूरा आदि हो.
- कुछ विचारकों के अनुसार सामान्यों की यथार्थ सत्ता होती है. कुछ इन सामान्यों को मात्र नाम मानते हैं तो कुछ इन्हें केवल अनुभव द्वारा मन पर डाले गए संप्रत्यय मानते हैं.
- दर्शन के इतिहास में सामान्यों के स्वरूप के विषय में तीन विचारधारायें प्रसिद्ध हैं—(1) यथार्थवाद, (2) नामवाद व (3) संप्रत्ययवाद.
- प्लेटो के अनुसार किसी वस्तु का संप्रत्यय जिसमें उस प्रकार की सभी वस्तुओं के सामान्य गुण निहित हों एक सामान्य विचार है और इस सामान्य की भी सत्ता है, क्योंकि वस्तु के पूर्व यदि यह सामान्य न होता तो वस्तु ही न होती. दूसरे शब्दों में प्रत्येक वस्तु के संप्रत्यय की यथार्थ सत्ता होती है.
- प्लेटो के अनुसार सामान्यों की सत्ता है और यथार्थ है. इन सामान्यों के विविध रूप हैं जैसे वस्तुओं–घर, कुत्ता, मनुष्य आदि–के वर्गों की, गुणों–श्वेतपन, गोलपन आदि की, मूल्यों–शुभत्व, सौन्दर्य आदि की, सम्बन्धों–समानता, अनुरूपता आदि की सत्ता है.
- सामान्य अमूर्त सत्ताएं हैं और ये विचारों के दैवी जगत् में स्थित हैं और मूर्त वस्तुओं से पृथक् हैं. मूर्त वस्तु या विशेष वस्तु से सामान्य, सत्यता और मूल्य की दृष्टि से श्रेष्ठ हैं.
- सामान्य सत हैं और विशेष (वस्तुएं) उनकी प्रतिलिपियाँ या आभास हैं.
- सामान्य न मानसिक हैं न भौतिक हैं. ये किसी मन–मनुष्य या ईश्वर–के विचार नहीं हैं. इनकी पृथक् एवं स्वतन्त्र सत्ताएं हैं.
- सामान्यों की सत्ता नित्य व अविनाशी है. इनका प्रसर-काल से कोई सम्बन्ध नहीं है. ये दोनों से परे हैं.
- ये सामान्य निम्न से उच्च स्थिति तक पदानुक्रमिकता में स्थित है और परस्पर सुसंगत ढंग से अन्तर्सम्बद्ध हैं तथा निम्न सामान्यों को प्रेरित करते हैं. सर्वोच्च सामान्य शिव (शुभ) का सामान्य है.
- इनकी अनुभूति तर्कबुद्ध न कि संवेदना से होती है. संवेदना केवल इन्हें जानने का अवसर प्रदान करती और उत्तेजित करती है.
- ये सामान्य समस्त जागतिक वस्तुओं के मूल प्रारूप हैं. जगत् की मूर्तवस्तुएं इन सामान्यों की अंशभागी हैं अर्थात् वस्तुएं आंशिक रूप से सत और आंशिक रूप से असत हैं.
- सामान्य स्वयं में पूर्ण, शाश्वत, बोधमय, बोधगम्य, व नित्य सत्याएं हैं.
- पाइथागोरस से प्रभावित प्लेटो ने सामान्यों को संख्या भी कहा, क्योंकि संख्या सीमा होती है और सामान्य परम सामान्य शिवम की सीमाएं हैं.
- सामान्य स्वयं में जगत् के मूल द्रव्य या सार हैं और सार्वभौम दिव्य सत्ताएं हैं. समस्त अनेकतापूर्ण जगत् इन्हीं से उदभूत है. संसार में मानसिक, भौतिक वस्तुओं, गुणों, सम्बन्धों, मूल्यों आदि के पृथक्-पृथक् सामान्य हैं.
- ये सभी सामान्य परम सामान्य शिवम् में अन्तर्निहित हैं, परन्तु ये ध्यानेय है कि शिवम् से ये उत्पन्न नहीं हैं.
- इस प्रकार सामान्यों की सत्ता यथार्थ है–प्लेटो इसका प्रबल पक्षधर है.
- अरस्तू ने प्लेटो के सामान्यों के सिद्धान्त को स्वीकारा तो परन्तु उसने प्लेटो के

- प्रकृति की समरूपता आग उष्ण और जल सर्वत्र ठंडा होता ही है से भी यह सिद्ध नहीं है कि वस्तुओं के स्वभाव जैसे देखे गए हैं वैसे भविष्य में भी बने रहेंगे
- पाश्चात्य दार्शनिक ह्यूम ने भी चार्वाकों की तरह कहा था कि समस्त ज्ञान हमारे भूतकालीन अनुभवों पर आधारित है. सूर्य कल भी उदय होगा और आग कल भी जलाएगी—इसकी गारन्टी तर्कबुद्धि (अनुमान) कैसे दे सकती है. प्रश्न निश्चयात्मक ज्ञान का है अतः अनुभव (प्रत्यक्ष) ही साधन है.
- क्या कारण-कार्य सम्बन्ध सार्वभौम नहीं है और इस नियम के अनुसार अनुमान नहीं निकाला जा सकता है? चार्वाक इसे भी सर्वत्र प्रत्यक्षता के अभाव के कारण अस्वीकार करते हैं.
- चार्वाक यह भी कहते हैं कि गीली लकड़ी के कारण धुआँ होता है और आग का होना सिद्ध होता है. अतः इस शर्त को बिना प्रत्यक्ष किए धुआँ और आग के बीच अटूट और सार्वभौम सम्बन्ध असिद्ध ही रहेगा.
- चार्वाक सद्ग्रन्थों (वेदादि) के वचनों को प्रामाणिक नहीं मानते, क्योंकि उनके अनुसार ये सभी धूर्त पुरोहितों द्वारा अपने स्वार्थ के लिए लिखे गये. शब्द जो सुना गया हो वह प्रत्यक्ष है और वह ज्ञान वैध है.
- चार्वाकों के अनुसार कभी-कभी अनुमान सच होता है पर कभी-कभी झूठ भी होता है. अतः अनुमान निश्चयात्मक सत्य का साधन नहीं है.

न्याय-वैशेषिक ज्ञान-मीमांसा

- न्याय-वैशेषिक के अनुसार ज्ञान (बुद्धि) वस्तु को प्रकाशित करता है. प्रमा (ज्ञान) वैध और अवैध दो प्रकार का होता है.
- वैध ज्ञान के साधन प्रत्यक्ष, अनुमान शब्द प्रमाण और तुलना (उपमान) होते हैं.
- वैशेषिक प्रत्यक्ष और अनुमान को ही मानते हैं और तुलना तथा शब्द प्रमाण को क्रमशः प्रत्यक्ष और अनुमान के अन्तर्गत ही मानते हैं.
- अवैध ज्ञान (अप्रमा) स्मृति, संशय भ्रम (विपर्यय) और परिकलनात्मक तर्क से उत्पन्न होता है. सत्य ज्ञान की परीक्षा ज्ञान और वस्तु के संवाद से होती है. बालू देख कर अगर पास जाकर बालू ही मिले तो ज्ञान सत्य है अन्यथा वह ज्ञान असत्य है.
- प्रत्यक्ष ज्ञान इन्द्रियों से उत्पन्न निश्चित और सत्य एवं तात्कालिक होता है. प्रत्यक्ष ज्ञान लौकिक व अलौकिक होता है. लौकिक ज्ञान बाह्य और आन्तरिक जगत् से सम्बन्धित होता है.
- बाह्य वस्तुओं का ज्ञान पंचेन्द्रियों से व आन्तरिक जगत् का ज्ञान मन के द्वारा होता है
- अलौकिक ज्ञान तीन प्रकार सामान्य लक्षण, ज्ञान लक्षण और योगज होता है सामान्य लक्षण ज्ञान 'मनुष्य नाशवान है' में है. ज्ञान लक्षण का उदाहरण सुगन्ध द्वारा अंधेरे में पड़ी चन्दन की लकड़ी का ज्ञान है.
- योगज ज्ञान प्रज्ञात्मक ज्ञान है. योगी भूत, भविष्य या गोपनीय वस्तुओं को जान लेते हैं.
- आन्तरिक ज्ञान में सुख, दुःख, इच्छा, द्वेष, प्रयत्न और ज्ञान आदि आत्मा के गुणों को मन ही प्रत्यक्ष करता है.
- न्याय प्रत्यक्ष को निर्विकल्प, सविकल्प और प्रत्यभिज्ञा में भी वर्गीकृत करता है. 'कुछ है' का ज्ञान निर्विकल्प है. 'कुछ है और रंग और आकार भी है' सविकल्प प्रत्यक्ष है. प्रत्यभिज्ञा पूर्व में देखी गयी वस्तु की पुनर्पहिचान है.
- अनुमान परोक्ष ज्ञान है जो किसी माध्यम जैसे चिन्ह (लिंग) के द्वारा होता है. जैसे धुआँ देख कर अग्नि के होने का ज्ञान अनुमान में व्याप्ति सम्बन्ध के कारण देखे से अनदेखे की ओर जाते हैं. जैसे 'धुआँ होने पर आग होती है' और 'राम नाशवान है', क्योंकि सभी मनुष्य अब तक मरते देखे गए हैं.
- नैयायिकों ने अनुमान निकालने के लिए पश्चिमी न्यायवाक्यीय ढाँचे को तीन सदस्यीय के स्थान पर पंचसदस्यीय बना दिया और उसमें साध्य व पक्ष वाक्यों के क्रम बदल दिये. पर परिणाम में दोनों एक से ही हैं. जैसे—

  भारतीय विधि (न्याय)
  राम नाशवान है (प्रतिज्ञा);
  क्योंकि राम मनुष्य है (हेतु);
  सभी मनुष्य नाशवान हैं जैसे विवेकानन्द, गांधी (उदाहरण) साध्य वाक्य;
  राम भी मनुष्य है (उपनय) पक्ष वाक्य;
  इसलिए राम नाशवान है (निष्कर्ष).

  पश्चिमी विधि (अरस्तू)
  (सभी मनुष्य नाशवान, हैं—साध्य वाक्य,
  राम (एक) मनुष्य है—पक्ष वाक्य,
  इसलिए राम नाशवान है—निष्कर्ष).
- इस प्रकार के अनुमान की दो शर्तें हैं—मध्य पद (हेतु पद) का ज्ञान जो पक्ष वाक्य में होता है (मनुष्य) और हेतु व साध्य (मनुष्य व नाशवानता) में व्याप्ति सम्बन्ध. व्याप्ति सम्बन्ध सहचार सम्बन्ध है. धुएं के साथ आग का सहचार है. जहाँ धुआँ है वहाँ आग है पर यह आवश्यक नहीं है कि जहाँ आग हो वहाँ धुआँ भी हो.
- न्याय ने अनुमान के दो भेद—स्वार्थानुमान और परार्थानुमान बताए—स्वार्थानुमान निज के ज्ञान से सम्बन्धित होता है और परार्थानुमान दूसरों को वही ज्ञान समझाने के लिए होता है
- न्याय ने एक और वर्गीकरण—पूर्ववत, और शेषवत और सामान्यतोदृष्ट का भी प्रस्तुत किया. देखे हुए कारण से अनदेखे परिणाम का अनुमान पूर्ववत् अनुमान है जैसे काले भारी बादलों से भावी वर्षा का अनुमान.
- देखे हुए कार्य से अनदेखे कारण का अनुमान शेषवत है. जैसे बाढ़ देखकर वर्षा होने का अनुमान करना. चन्द्रमा की विभिन्न स्थितियों को देखकर उसके गतिशील होने का अनुमान सामान्यतोदृष्ट का उदाहरण है.
- न्याय हेतु पद और साध्य पद के विधायक, निषेधात्मक और दोनों तरीकों के सम्बन्ध के आधार पर केवलान्वयी, केवल व्यतिरेकी और अन्वय व्यतिरेकी अनुमानों का भी वर्गीकरण प्रस्तुत करता है.
- न्याय ने हेत्वाभास (Fallacies) पाँच बताये हैं जो सभी वस्तुगत हैं. ये दोष हेतु पद के अनियमित होने (सव्यभिचार दोष), विरुद्ध होने (विरुद्ध दोष) अनुमानतः विरुद्ध होने (सत्प्रतिपक्ष दोष) असिद्ध होने (असिद्ध दोष) और अनुमान रहित विरुद्ध होने (बाधित दोष) से उत्पन्न होते हैं. आकारगत दोषों को न्याय ने छल, जाति व निग्रह स्थान के अनेक रूपों में समझाया है.
- उपमान ज्ञान का वह साधन है जिसमें किसी के वर्णन के माध्यम से तुलना के आधार पर अन्य वस्तु को जानना. गाय के वर्णन के आधार पर नील गाय (जंगली गाय) को पहचानना इसका उदाहरण है.
- शब्द प्रमाण का सम्बन्ध अधिकारी पुरुषों के उन वचनों से है जिनका सम्बन्ध दृष्ट वस्तुओं से हो या अलौकिक वस्तुओं (अदृष्ट) से हो. जैसे सन्तों, ग्रन्थों की वाणी और वैज्ञानिकों या पैगम्बरों की वाणी. इसी प्रकार लौकिक और वैदिक शब्द प्रमाण के भेद मान्य हैं.
- न्याय की ज्ञान मीमांसा सामान्यतः भारत के सभी दर्शनों ने थोड़ी-थोड़ी व्याख्यान्तर से स्वीकार की. ज्ञान मीमांसा के विशद विवेचन के कारण ही गौतम के दर्शन को न्यायशास्त्र कहा गया.

बौद्ध ज्ञान-मीमांसा

- बुद्ध के अनुसार व्यक्ति नाम और रूप (मानसिक और भौतिक) का संघात है. नाम चेतना की रूपान्तरित दशाएं—भावना, प्रत्यक्ष बुद्धि आदि हैं और रूप

चार तत्व (पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु) का मिश्रित रूप है.

- रूप, संज्ञा (प्रत्यक्ष), वेदना (भावना), संस्कार (मानसिक स्थिति और संकल्प) और विज्ञान (तर्कबुद्धि) समग्र अस्तित्व है. स्थायी आत्मा नहीं है. केवल चेतना का परिवर्तनशील सतत प्रवाह विविध प्रकार के ज्ञान देता है.
- ज्ञान की क्रममाला (चित्तसन्तान) में समस्त ज्ञान चेतना और वस्तु के संसर्ग से संवेदनाओं द्वारा उत्पन्न होता है. विज्ञान, वेदना और संस्कार ही क्रमशः ज्ञान, भाव और संकल्प हैं. मानसिक स्तर साहचर्य से शासित रहता है.
- मानसिक सत्ता स्वयं भौतिक है, इसमें अचेतन भी है. चूँकि सर्वत्र सतत परिवर्तन है अतः व्यष्टि-भाव एक भ्रम ही है, क्योंकि नाम-रूप से कर्म बनते हैं. यह पूछना भी गलत है कि अनुभवकर्ता कौन है, क्योंकि समस्त मन और वस्तु के सम्बन्धों का अनुबन्धन मात्र है. पुनर्जन्म में भी पूर्व पुरुष नहीं आता है केवल चरित्र या लक्षण आता है. कुछ भी पुराना वही नहीं है.
- ज्ञान मीमांसा में बौद्ध प्रत्यक्ष और अनुमान को स्वीकार करते हैं. परन्तु अनुमान का आधार कारण-कार्य की शृंखला है न कि किसी चिन्ह से वस्तु का अनुमान जैसा नैयायिक मानते हैं. कार्य से कारण का अनुमान संभव है.
- बौद्ध सर्वत्र संभवन (परिवर्तन) देखने के कारण ही कारण-कार्य की शृंखला देखते हैं. कारण है तो कार्य है; कारण अनुपस्थित है तो कार्य भी अनुपस्थित है.
- आगमनात्मक अनुमान भी अनुभव की सीमा में वैध होते हैं, परन्तु ये सामान्यीकरण निरपेक्ष रूप से वैध नहीं होते. बुद्ध स्वयं प्रथम और अन्तिम कारणों के प्रति चुप रहे और वर्तमान अनुभव का विश्लेषण करते रहे.
- बुद्ध के अनुसार मानव बुद्धि की सीमा है. वह अतीन्द्रिय सत्ता को नहीं जान सकती. लॉक की तरह उन्होंने यह माना कि मानव ज्ञान का आधार अनुभव है और यह क्यों होता है, कौन करता है, अज्ञेय है? सर्वत्र अनुभवन है.
- बौद्धों ने शब्द प्रमाण अथवा वेदों को भी वैध ज्ञान का आधार नहीं माना. उनके अनुसार अज्ञेय सत्ता, परम सत (ब्रह्म) का वैदिक ज्ञान भी अपूर्ण है. बुद्ध स्वयं अपनी वाणी को विवेक से पुष्ट होने पर स्वीकार करने को कहते थे.
- अपने शिष्य आनन्द से बुद्ध ने कहा था कि जिस प्रकार पतझड़ में असंख्य पत्तियाँ झड़ती हैं, उसी प्रकार असंख्य सत्य हैं. वह केवल मुट्ठीभर सत्य आनन्द को दे रहे थे. बुद्ध के इस विचार को बाद में बौद्ध सम्प्रदायों ने विकसित किया.
- वैभाषिकों के अनुसार जो ज्ञान इन्द्रियों से उत्पन्न होकर अर्थ का साक्षात्कार कराता है वही प्रत्यक्ष है. प्रत्यक्ष इन्द्रियाँ द्वारा बाह्य जगत् का ज्ञान और मन द्वारा आभ्यांतरिक ज्ञान होता है. दोनों में एक क्षण का भेद होता है.
- वैभाषिक चैतसिक धर्मों (सुख-दु:खादि) के ज्ञान को स्वसंवेदन कहते हैं और इसे भी प्रत्यक्ष का रूप मानते हैं. संवेदनाएं ही निर्विकल्प प्रत्यक्ष है. शेष मानसिक स्तर का ज्ञान सविकल्प प्रत्यक्ष है.
- योगि-प्रत्यक्ष भी उन्हें स्वीकार है. यहाँ यह बात ध्यानेय है कि वैभाषिक बाह्य वस्तु और मन को पृथक् सत्ताएं मानने के कारण वस्तु ज्ञान को अपरोक्ष (Direct) मानते हैं, परन्तु सौत्रांतिकों ने बाह्य सत्ता के ज्ञान को अनुमान ही माना, क्योंकि उनके अनुसार बाह्य सत्ता को हम संवेदनाओं के रूप में ही जानते हैं.
- अनुमान को सभी सम्प्रदायों ने स्वीकार किया तथा व्याप्ति को (1) कार्य-कारण रूपा और (2) तादात्म्य रूपा माना है. धूम से अग्नि का अनुमान प्रथम कोटि का है और शिंशुपा को देखकर यह ज्ञान कि यह वृक्ष है दूसरी कोटि का अनुमान है.
- अनुमान दो प्रकार का—स्वार्थानुमान व परार्थानुमान होता है.
- सौत्रातिक बाह्य अनुमेयवादी हैं. अतः अनुमान ज्ञान में वे चार बातें मानते हैं—

  (1) आलम्बन (विषय-वस्तु) (2) समनन्तर (पूर्ववर्ती ज्ञान) (3) अधिपति अर्थात् इन्द्रियाँ और (4) सहकारी प्रत्यय जैसे वस्तु का आकार प्रकार आदि.
- विज्ञानवादियों ने तात्विक दृष्टि से बाह्य जगत् को भी मानसिक सत्ता माना और शून्यवादियों ने समस्त सत्ता (मानसिक-भौतिक) को सापेक्ष, संवित या शून्य कहा. फिर भी इन दोनों ने प्रत्यक्ष और अनुमान मात्र को ज्ञान का साधन माना.

अद्वैत वेदान्त की ज्ञान मीमांसा

- तात्विक दृष्टि से शंकर सर्वत्र सार्वभौम चेतना (आत्मा) की अद्वैत सत्ता स्वीकार करते हुए भेद और पार्थक्य का निषेध करते हैं, परन्तु व्यावहारिक दृष्टि से वह ज्ञाता, ज्ञेय व ज्ञान के भेद को स्वीकार कर ज्ञान-प्रक्रिया समझाते हैं.
- शंकर के अनुसार ज्ञानेन्द्रियों के अतिरिक्त अन्तःकरण चतुष्टय (मन, बुद्धि, अहंकार और चित्त) आत्मा के प्रकाश से प्रकाशित ज्ञान में सहायक होता है. अन्तःकरण पारदर्शी होता है और बाह्य वस्तु के अनुसार बदलता या सदृश वृत्ति धारण करता है. प्रत्येक व्यक्ति का अन्तःकरण भिन्न भिन्न होता है.
- मन (संशय), बुद्धि (निश्चय), अहं (गर्व) और चित्त (ध्यान व स्मृति) एक ही अन्तःकरण के पर्याय या कार्यात्मक नाम हैं. यह अन्तःकरण ही बाह्य वस्तु को प्रतिबिम्बित करता है.
- शंकर प्रत्यक्ष, अनुमान, शब्द प्रमाण को स्वीकार करते हैं, परन्तु बाद के वेदान्ती विचारक उपमा, अर्थापत्ति और अनुपलब्धि को भी ज्ञान का साधन मानते हैं.
- प्रत्यक्ष में वस्तु और (इन्द्रियों के माध्यम से उत्पन्न) चेतना का सीधा सम्बन्ध होता है. प्रत्यक्ष में वस्तु-चेतना और अन्तःकरण की चेतना एकत्व स्थापित करते हैं जिस प्रकार कमरे के आकाश और कमरे में रखे घड़े के भीतर के आकाश में एकत्व होता है.
- वस्तुतः समस्त ज्ञान ज्ञाता और ज्ञेय की तादात्म्यमय स्थिति है, क्योंकि ज्ञाता और ज्ञेय मूल-रूप में चेतना की भिन्न स्थितियाँ हैं.
- प्रत्यक्ष शंकर के अनुसार परम चेतना के दो रूपों का तादात्म्य है. एक ओर यह चेतना वस्तु के रूप में विशेषीकृत है तो दूसरी ओर वही परम चेतना पर्याय (अन्तःकरण की वृत्ति) के रूप में है जिसने वस्तु का रूप ग्रहण किया है.
- प्रत्यक्ष अभ्यांतर (इच्छा आदि) और बाह्य (इन्द्रियजन्य व इन्द्रियाजन्य) निर्विकल्प व सविकल्प तथा जीव साक्षी और ईश्वर साक्षी होते हैं. प्रथम दो प्रकार तो न्याय दर्शन द्वारा प्रस्तुत भेद हैं जो अद्वैत को स्वीकार हैं.
- जीव साक्षी प्रत्यक्ष में परम चेतना अन्तः-करण के रूप में विशेषीकृत होती है, परन्तु ईश्वर साक्षी प्रत्यक्ष में परम चेतना अन्तःकरण से सीमित या अनुबन्धित होती है, परन्तु यह अन्तःकरण से बाहर रहती हुई जीव दृष्टा होती है.
- जीव साक्षी प्रत्यक्षण में अविद्या की भूमिका होती है. ईश्वर माया से विशेषीकृत परमचेतना (ब्रह्म) है और माया से अनुबन्धित परम चेतना ईश्वर साक्षी होता है. ईश्वर का एक वैयक्तिक केन्द्र के रूप में जगत् से वही सम्बन्ध होता है जो जीव का अपने शरीर से होता है.
- भ्रमगत प्रत्यक्षण तब होता है जब या तो अन्तःकरण में इन्द्रिय में त्रुटि के कारण (जैसे पीलिया का रोग) वृत्ति बदल जाती है या भूतकालीन स्मृति वस्तु में आरोपित हो जाती है जैसे वर्तमान रस्सी का पूर्व स्मृति के कारण साँप दिख जाना.

- शंकर प्रत्यभिज्ञा (पुनर्ज्ञान) को भी ज्ञान का साधन स्वीकार करते हैं. शंकर व्यावहारिक जगत्, स्वप्न और भ्रम में भेद करते हैं जगत् स्वप्न और भ्रम से तार्किक दृष्टि से अधिक वास्तविक है
- शंकर अनुमान को उसी रूप में स्वीकार करते हैं जिस रूप में न्याय की प्रस्तुति है
- शंकर के लिए श्रुति प्रमाण (वेद) सर्वश्रेष्ठ और अकाट्य है वेद अपौरुषेय और ईश्वर की वाणी है वेद वाणी के अर्थ नित्य है अतः अत्यधिक विश्वसनीय हैं.
- स्मृति परम रूप से वैध ज्ञान नहीं देती है; परन्तु श्रुति के अनुकूल होने पर यह ज्ञान वैध होता है.
- शंकर अज्ञान को अल्पज्ञान या विपर्यय ज्ञान मानते हुए उसे भाव रूप मानते हैं.
- उपमान सादृश्य ज्ञान है गाय के ज्ञान से सादृश्यता के आधार पर नीलगाय की पहचान इसी प्रकार का ज्ञान है.

महत्वपूर्ण बिन्दु

* *चार्वाक प्रत्यक्ष को ही ज्ञान का एकमात्र साधन मानते हैं.*
* *जैन दर्शन के अनुसार प्रत्यक्ष, अनुमान और शब्द-प्रमाण ज्ञान के साधन हैं.*
* *बौद्ध दर्शन प्रत्यक्ष और अनुमान को ही ज्ञान-साधन मानते हैं.*
* *न्याय-वैशेषिक प्रत्यक्ष, अनुमान शब्द प्रमाण और उपमान को स्वीकार करते है. वैशेषिक उपमान को अनुमान के अन्तर्गत मानता है. न्याय प्रत्यभिज्ञा को भी प्रमाण मानता है.*
* *सांख्य और योग प्रत्यक्ष, अनुमान और शब्द प्रमाण को स्वीकार करते हैं. प्रत्यभिज्ञा को प्रत्यक्षीकरण का ही रूप मानते हैं.*
* *मीमांसा दार्शनिक प्रत्यक्ष, अनुमान, शब्द प्रमाण, उपमान, अर्थापत्ति और अनुपलब्धि को प्रमाण मानते हैं. कुमारिल भट्ट ने अनुपलब्धि को माना, परन्तु प्रभाकर ने उसकी व्याख्या दूसरे ढंग से की. इन्होंने स्मृति को ज्ञान प्रमाण नहीं माना.*
* *अद्वैत वेदान्त (शंकरवादी) मीमांसा के छः साधनों को स्वीकार करते हैं. विपर्यय ज्ञान को ये सभी अनिर्वचनीय ख्याति मानते हैं.*
* *विशिष्टाद्वैतवादी रामानुज प्रत्यक्ष, अनुमान व शब्द प्रमाण को ज्ञान का स्रोत मानते हैं और योगज प्रत्यक्ष को स्वतंत्र स्रोत मानते हुए इसे इन्द्रिय प्रत्यक्ष का ही एक रूप मानते हैं. स्मृति इनके अनुसार ज्ञान का स्वतंत्र स्रोत है. उपमान को कोई स्थान नहीं है. अर्थापत्ति और संभाव अनुभाव के ही रूप हैं.*
* *समस्त भारतीय चिन्तन प्रत्यक्ष, अनुमान (चार्वाक को छोड़कर), शब्द प्रमाण (बौद्ध और चार्वाक को छोड़कर) ज्ञान के वैध स्रोत मानता है.*

- अद्वैत अर्थापत्ति को ज्ञान का साधन मानता है जैसे देवदत्त घर में नहीं है तो बाहर है यहाँ शर्त यह है कि वह जीवित है. जीवित होना अबाध सत्य है. इसी आधार पर देवदत्त के घर में न होने पर उसका बाहर होना सिद्ध होता है.
- अद्वैत वेदान्त अनुपलब्धि (अभाव) को ज्ञान का साधन मानता है. प्रभाकर के अनुसार अँधेरे में रखे घड़े की अनुपलब्धि का ज्ञान तब होता है जब उसे प्रकट करने वाली अन्य सामग्रियाँ हों और घड़ा न हो. यही योग्यानुपलब्धि या अनुपलब्धि है.

सत्य और भ्रान्ति (Truth and Error)

- ज्ञान मीमांसा में वस्तुज्ञान के सत्य होने के सम्बन्ध में तीन प्रकार के सिद्धान्त दर्शन के क्षेत्र में विकसित हुए हैं. इन्हें क्रमशः (1) संवाद सिद्धान्त (Correspondence theory) (2) संसक्तता का सिद्धान्त (Coherence theory), (3) व्यावहारिकता-वादी, अर्थ क्रियावादी या उपयोगितावादी सिद्धान्त (Pragmatic theory) कहा जाता है.
- संवाद या संवादिता के सिद्धान्त के अनुसार हमारा वस्तुज्ञान यदि वस्तु स्वयं के अनुरूप हो तो सत्य है. जैसे दूर से देखे गए पानी को यदि पास जाकर पानी ही पाएं तो यह ज्ञान सत्य है और अगर बालू पाएं तो असत्य है.
- यह सिद्धान्त सभी यथार्थवादी दार्शनिकों ने स्वीकार किया. भारत में न्याय, सांख्य, मीमांसा दर्शन और पश्चिम में लॉक इसके प्रबल समर्थक हैं. न्याय ने तो सफल क्रियाशीलता इसका लक्षण कहा.
- संसक्तता सिद्धान्त के अनुसार यदि सत वस्तु का हमारा ज्ञान उस वस्तु का अविभाज्य अंग है तो ज्ञान सत्य है अन्यथा असत्य है. जैसे 'दूध काला है' में हमारा ज्ञान दूसरी सत वस्तु कोयला का विशेषण है अतः सामंजस्य नहीं है, परन्तु 'दूध श्वेत है' में श्वेत विशेषण दूध का अविभाज्य अंग है अतः ज्ञान और वस्तु में सामंजस्य है. यह सत्य है.
- समस्त अध्यात्मवादी विचारक (Idealistic Thinkers of the World) जो एक चेतना या विचार को परम सत्ता मानते हैं और जगत् को एक समन्वित पूर्णता मानते हैं. इस सिद्धान्त के समर्थक हैं.
- Pragmatic Theory of Truth के प्रथम सूत्रधार सी. एस. पियर्स के अनुसार किसी विश्वास या विचार के सत्य होने की कसौटी उसका व्यावहारिक, तदनुकूल परिणाम होता है.
- परन्तु यह सिद्धान्त संवाद और संसक्तता सिद्धान्त का पुनर्कथन माना गया. विलियम जेम्स, जान डेवी और शिलर ने इसे और विकसित किया जेम्स के अनुसार सत्य मानवीय प्रयोजन और उसके मूल्यांकन से सम्बन्धित होता है और सदैव सापेक्ष होता है
- जेम्स के अनुसार समस्त जागतिक सत्य मानव निर्मित हैं और उनकी उपयोगिता ही उन्हें सत्यता प्रदान करती है. अनुभव के संसार में धन और स्वास्थ्य के निर्माण के सदृश सत्य भी मानव-निर्मित होते हैं.
- मूल्यांकन और सत्यापन की प्रक्रिया में किसी विचार का सत्य जन्म लेता है.
- जागतिक सत्य विशेष, सापेक्ष और परिवर्तनशील होते हैं. गणित के सत्य भी सापेक्ष होते हैं. अंक जगत् में दो और दो सदैव चार होते हैं. पर दो भेड़ें और दो बकरियाँ. चार बकरियाँ या भेड़ें नहीं होतीं किसी वस्तु का भूमध्य रेखा पर भार और ध्रुवों पर भार समान नहीं होता है.
- जेम्स ने यह भी कहा कि सत्य उपयोगी होता है और उपयोगी सत्य होता है.
- सत्य और उपयोगिता जटिल मानसिक प्रक्रिया के दो पक्ष ही हैं.
- सत्य शुभ की एक उपजाति है. सत्य उसी का नाम है जो विश्वास की प्रक्रिया में शुभ सिद्ध हो. इस प्रकार सत्य मूल्य या मूल्य का दावा है जो सत्यापन में जीवन के लिए उपयोगी सिद्ध हो उठता है.
- व्यावहारिकतावादी संवादिता और संसक्तता सिद्धान्त का विरोध करते हैं.
- इनकी दृष्टि में संसार में न निरपेक्ष सत्य हैं न निरपेक्ष असत्य हैं. विशेष प्रयोजन और उपयोग की दृष्टि से जब किसी विश्वास का दावा सत्यापन में सत्य न सिद्ध हो तो वही असत्य है.
- ज्यामिति में वर्ग को गोल कहना असंगत है, परन्तु लन्दन में राउन्ड स्क्वायर नामक पार्क है. अतः सत्य प्रयोजनात्मक, सन्दर्भात्मक, व प्रयोगात्मक होता है. ज्ञान का निर्धारण वस्तुगत न होकर आत्मगत प्रयोजन के अनुसार होता है.
- सामान्यतः कोई ज्ञान अगर व्यवहार में क्रियाशील है तो वह सत्य है.
- व्यावहारिकतावाद के सिद्धान्त कि सत्य और उपयोगिता एक ही तथ्य हैं की प्रखर आलोचना भी हुई है.

ख्यातिवाद (भ्रमविषयक ज्ञानवाद) अन्यथा ख्याति, अख्याति व अनिर्वचनीय ख्याति)

- वैध ज्ञान संशय, विपर्यय व विभ्रम से पृथक् होता है. फिर भी इस प्रकार के त्रुटिपूर्ण ज्ञान या विपर्ययात्मक ज्ञान के कारण की खोज की प्रक्रिया में अनेक सिद्धान्त भारतीय चिन्तन में विकसित हुए उन्हें ख्यातियाँ कहा गया.

- न्याय के अनुसार जब हम रेगिस्तान पर सूर्य की झिलमिल किरणों के प्रभाव से बालू को पानी जानने की भूल करते है तो हम झिलमिल किरणों की जगह पानी प्रत्यक्ष करते हैं. एक वस्तु में दूसरी वस्तु देखना अन्यथा ख्याति है.
- सौत्रान्तिकों के अनुसार भ्रम या भूल का कारण ज्ञान में विद्यमान वस्तु का आरोप बाह्य वस्तु में पड़ता है. इसे ज्ञानाकार ख्याति कहते हैं.
- योगाचार ज्ञाता, ज्ञान और ज्ञेय सभी को मानसिक सत्ता मानते हुए व्यावहारिक दृष्टि से न्याय और सौत्रान्तिकों से सहमत हैं, परन्तु भ्रम को आत्म ख्याति मानते हैं.
- माध्यमिक दर्शन शून्यवादी होने के कारण आन्तरिक और बाह्य जगत् को शून्य या असत मानते हैं अतः समस्त ज्ञान भी असत है. ये असत ख्यातिवादी हैं.
- जैन दर्शन और कुमारिल भट्ट न्याय के अन्यथा ख्याति विचार से सहमत हैं.
- अद्वैतवेदान्त (शंकर) के अनुसार सीपी में चाँदी का प्रत्यक्षीकरण भूतकालीन अनुभव से प्राप्त चाँदी का विचार जो स्मृति में होता है वही ज्ञानेन्द्रिय की त्रुटि के कारण वस्तु में आरोपित हो जाता है. यह अनिवर्चनीय ख्याति है.
- यह भ्रम अनिर्वचनीय इसलिए है कि सीपी में चाँदी न तो सत है (क्योंकि थोड़ी देर बाद भ्रम-निवारण हो जाएगा, न असत है. (क्योंकि इस समय है और क्रियाशीलता उत्पन्न कर रहा है) न एक साथ दोनों है (क्योंकि यह व्याघात होगा) और न दोनों (सत, असत) का अभाव है. अतः भ्रम सर्वथा अनिर्वचनीय ख्याति है.
- प्रभाकर (मीमांसा) के अनुसार भ्रम अख्याति या निर्वेकख्याति है, क्योंकि इसमें सत और आभास के मध्य अभेद है. वाद का ज्ञान भ्रम का निषेध नहीं करता है. यह केवल भेद को स्पष्ट कर देता है. प्रभाकर के अनुसार भ्रम तो अनुभव है और सत है. यह ज्ञान नहीं है. सत्यता और असत्यता का सम्बन्ध तो बाद के ज्ञान से होता है.
- रामानुजाचार्य सतख्यातिवाद के पक्षधर हैं. समस्त ज्ञान (भ्रम भी) सत का है. कारण यह है कि पंचीकरण सिद्धान्त के अनुसार समस्त जगत् पाँच तत्वों से बना है. मात्रा भेद से प्रत्येक तत्व प्रत्येक वस्तु में है अतः रस्सी में साँप देखना सत है, क्योंकि रस्सी में साँप के कुछ समान लक्षण (पतलापन, टेढ़ापन आदि) हैं अन्यथा मेंज में हम साँप क्यों नहीं देखते?
- अद्वैतवाद का अनिर्वचनीय ख्यातिवाद अन्यथा ख्याति और अख्याति और असत ख्याति तीनों की त्रुटियों का निवारक है अन्यथा ख्याति में अन्यथा वस्तु का सोत न स्मृति है न वस्तु स्वयं है, असत ख्याति में सर्प-प्रतीत का विषय (रस्सी) असत और शून्य नहीं है. अख्याति में ज्ञानाभाव भी नहीं है. इसी प्रकार आत्म-ख्यातिवाद गलत है, क्योंकि आत्मा के कारण कोई भ्रम में नहीं पड़ता है.
- शंकर के अनुसार अज्ञान सर्वथा ज्ञानाभाव नहीं है वह भाव रूप है. चूँकि अविद्या स्वयं अनिर्वचनीय है, समस्त वृत्तियों के मूल में मूल अविद्या है जो सत्य और असत्य का मिश्रण है. अतः भ्रम भी निरपेक्ष रूप से अनिर्वचनीय है.

ध्यानेय बिन्दु

* *भ्रम त्रुटि या आभास के विषय में शंकर का मत अनिर्वचनीय ख्यातिवाद है अर्थात् निश्चयात्मक रूप से कुछ भी नहीं कहा जा सकता है.*
* *यथार्थवादी न्याय का सिद्धान्त अन्यथा ख्यातिवाद है अर्थात् एक वस्तु में दूसरी आरोपित वस्तु का ज्ञान होता है जैसे रस्सी में साँप परन्तु इसमें आरोपक कौन है, क्या सोत है और इस ज्ञान का स्वरूप क्या है? न्याय नहीं बताता है.*
* *अख्यातिवाद के समर्थक प्रभाकर हैं जो रस्सी में साँप देखने को अनुभव मानते हैं ज्ञान नहीं. ज्ञान अनुभव के बाद होता है वही सत्य या असत्य होता है. अनुभव तो सत (Real) है उसे सत्य या असत्य नहीं कहा जा सकता है.*
* *अनिर्वचनीय ख्यातिवाद में रस्सी में साँप का सोत पूर्व स्मृति है जो आरोपित है. इस विपर्यय को परम रूप से सत या असत नहीं कहा जा सकता है—यह सर्वथा अनिर्वचनीय ज्ञान है. शंकर का मत पूर्ण और तर्क संगत है.*

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. निम्नलिखित में से द्रव्य के सम्बन्ध में कौनसा विचार वैशेषिक दर्शन का है?
   (A) मूल द्रव्य दो हैं
   (B) मूल द्रव्य एक है
   (C) मूल द्रव्य असंख्य कणिकाएं हैं
   (D) मूल द्रव्य नौ हैं
2. जल समस्त सृष्टि का मूल द्रव्य है. यह किसने कहा था?
   (A) अरस्तू ने
   (B) पाइथागोरस ने
   (C) डेकार्ट ने
   (D) थेलीज ने
3. द्रव्य वह है जिसमें गुण और कर्म समाहित होते हैं. यह किसने कहा?
   (A) डेकार्ट ने
   (B) बर्कले ने
   (C) बुद्ध ने
   (D) वैशेषिक दर्शन ने
4. द्रव्य में सामान्य और विशेष या विचार और पुदगल अपृथक् रूप से विद्यमान होते हैं. यह विचार किसका है?
   (A) अरस्तू का
   (B) लॉक का
   (C) बर्कले का
   (D) बौद्धों का
5. सृष्टि-विकास क्रम में निम्नतम अवस्था आकारहीन पुदगल और उच्चतम अवस्था पुदगल रहित आकार (ईश्वर) है. यह किसका विचार है?
   (A) डेकार्ट का
   (B) लाइबनिज का
   (C) लॉक का
   (D) अरस्तू का
6. समस्त सृष्टि विचार और विस्तार (पुदगल) के द्वैत का परिणाम है, परन्तु विचार और विस्तार निरपेक्ष द्रव्य ईश्वर के दो गुण या सापेक्ष द्रव्य हैं. यह विचार किसका है?
   (A) सांख्य दर्शन का
   (B) डेकार्ट का
   (C) अरस्तू का
   (D) बर्कले का
7. विचार और विस्तार पृथक् और एक-दूसरे से स्वतन्त्र द्रव्य हैं. यह किसका विचार है?
   (A) अरस्तू का
   (B) वैशेषिक दर्शन का
   (C) बौद्ध का
   (D) डेकार्ट का
8. मनस और शरीर के मध्य सम्बन्ध को लेकर निम्नलिखित में से कौनसा विचार डेकार्ट का है?
   (A) समानान्तरवाद

(B) अन्तक्रियावाद या प्रयत्नवाद
(C) पूर्वस्थापित सामंजस्यवाद
(D) एकत्ववाद

9. विचार (मनस) और विस्तार (पुद्गल) एक-दूसरे के विरोधी हैं. मनस अविभाज्य और विस्तार विभाज्य है. यह किसका सिद्धान्त है?
(A) बौद्धों का
(B) अरस्तू का
(C) डेकार्ट का
(D) लॉक का

10. यह किसने कहा कि समस्त ज्ञान अनुभवजन्य है और जन्मजात विचार नहीं है तथा मन एक कोरी पटिया के समान है?
(A) डेकार्ट ने
(B) स्पिनोजा ने
(C) लाइबनिज ने
(D) लॉक ने

11. लॉक के अनुसार वस्तु के प्राथमिक गुण (भार, ठोसत्व आदि) वस्तु में होते हैं, परन्तु गौण गुण (शब्द, रस, गन्ध आदि) इन्द्रियों से सम्बन्धित होते हैं इस पर बर्कले की प्रतिक्रिया क्या थी?
(A) बर्कले ने समर्थन किया
(B) बर्कले ने विरोध किया
(C) बर्कले ने न खण्डन किया न मण्डन किया
(D) बर्कले ने खण्डन-मण्डन दोनों किया

12. मनुष्य वस्तु स्वयं को नहीं जानता केवल वस्तु विषयक संवेदनाओं को जानता है. यह किसका विचार था?
(A) डेकार्ट का
(B) लॉक का
(C) अरस्तू का
(D) लाइबनिज का

13. लॉक ने आध्यात्मिक द्रव्य ईश्वर के अतिरिक्त जगत्-प्रक्रिया में सन्निहित कितने मूल द्रव्य स्वीकार किए?
(A) दो—मानसिक और भौतिक सूक्ष्म कणिकाएं
(B) चार—ईश्वर, ब्रह्माण्डीय मनस, देव और पुदगल
(C) तीन—ईश्वर, देव और पुदगल
(D) एक—ईश्वर

14. लॉक के अनुसार ईश्वर का ज्ञान तार्किक दृष्टि से—
(A) जन्मजात है
(B) अनुमेय है
(C) शास्त्रोक्त है
(D) समाधिगत है

15. बर्कले को निम्नांकित में से क्या कहा जा सकता है?
(A) नामवादी
(B) यथार्थवादी
(C) सापेक्षवादी
(D) यथार्थवादी एवं नामवादी दोनों

16. 'दृश्यते इति वर्तते' अर्थात् दृष्टि ही सृष्टि है' किसका विचार है?
(A) डेकार्ट का
(B) लॉक का
(C) बर्कले का
(D) ह्यूम का

17. मनरहित या पुद्गल निर्मित विश्व का विचार बर्कले के अनुसार
(A) यथार्थ विचार है
(B) अमूर्त विचार है
(C) यथार्थ और अमूर्त दोनों है
(D) न यथार्थ है न अमूर्त है

18. यह किसने कहा कि जगत् में भौतिक पिण्डों की सत्ता नहीं है केवल ईश्वर और आध्यात्मिक सत्ताएं हैं. समस्त सत्ता मानसिक है—
(A) लॉक
(B) डेकार्ट
(C) बर्कले
(D) अरस्तू

19. प्रत्यक्ष में आना ही सत्ता में होना है. यह किसका विचार है?
(A) ह्यूम का
(B) बौद्धों का
(C) बर्कले का
(D) लॉक का

20. समस्त सृष्टि एक प्रज्ञावान मनस एवं असंख्य अन्य मनसों का सुसंगत खेल है. यह कथन किसका है?
(A) बर्कले का
(B) लाइबनिज का
(C) अरस्तू का
(D) लॉक का

21. वैशेषिक के अनुसार आत्मा नौ द्रव्यों में एक द्रव्य है. आत्मा मूल रूप में क्या है?
(A) आत्मा चेतना ही है
(B) आत्मा चेतना रहित द्रव्य है
(C) आत्मा मूल रूप से क्रियाशील है
(D) आत्मा मूल रूप से ज्ञानमय है

22. निम्नांकित द्रव्य समूहों में वैशेषिक दर्शन किस समूह को सर्वव्यापी मानता है?
(A) आत्मा, वायु व आकाश
(B) आकाश, काल व प्रसर
(C) प्रसर, काल व आत्मा
(D) वायु, प्रसर और काल

23. वैशेषिकों के अनुसार स्पर्श और शब्द क्रमशः किन द्रव्यों के गुण हैं?
(A) पृथ्वी और आकाश के
(B) पृथ्वी और वायु के
(C) जल और वायु के
(D) वायु और आकाश के

24. वैशेषिकों ने चार सनातन किसे कहा?
(A) पृथ्वी, जल, वायु और आकाश को
(B) पृथ्वी, आकाश, प्रसर और काल को
(C) पृथ्वी, जल, अग्नि और वायु को
(D) पृथ्वी, अग्नि, प्रसर और काल को

25. सर्वत्र परिवर्तन ही प्रत्यक्ष है और इसका न आदि है न अन्त है. यह किसने कहा?
(A) कपिल ने
(B) जैमिनि ने
(C) कणाद ने
(D) बुद्ध ने

26. 'क्षणिकवाद' का सिद्धान्त किसने प्रतिपादित किया?
(A) कपिल ने
(B) शंकराचार्य ने
(C) वैशेषिकों ने
(D) बौद्धों ने

27. बुद्ध ने निम्नलिखित में किस कारणता के नियम को स्वीकारा?
(A) असत्कार्यवाद
(B) सतकार्यवाद
(C) प्रतीत्यसमुत्पाद
(D) विवर्तवाद

28. जगत् निसत्त (सतहीन) और निर्जीव (आत्मा-रहित) है—यह किसने कहा?
(A) भगवान महावीर ने
(B) भगवान बुद्ध ने
(C) आचार्य शंकर ने
(D) आचार्य रामानुज ने

29. जगत् में सर्वत्र शून्यता है—यह बौद्ध सम्प्रदायों में किसका विचार था?
(A) सौत्रांतिकों का
(B) वैभाषिकों का
(C) विज्ञानवादियों (योगाचार) का
(D) माध्यमिकों का

30. बौद्ध सम्प्रदायों में किसने मन और जगत् की स्वतंत्र और पृथक् सत्ता स्वीकार करते हुए कहा कि वस्तु-ज्ञान अपरोक्ष होता है?
(A) सौत्रांतिकों ने
(B) योगाचार दर्शन ने
(C) शून्यवादियों ने
(D) वैभाषिकों ने

31. सेण्ट अगस्टाइन का ईश्वर-विषयक विचार निम्नांकित में कौन है?
(A) ईश्वर प्रसरातीत, कालातीत और अनुभवातीत है
(B) ईश्वर प्रसरातीत, कालातीत और अनुभवगम्य है
(C) ईश्वर प्रसरातीत व अनुभवातीत है, परन्तु कालातीत नहीं है
(D) ईश्वर प्रसर काल में है, परन्तु अनुभवातीत है

32. निम्नलिखित में सेण्ट अगस्ताइन का कौन विचार है?
(A) ईश्वर बुद्धि का विषय है
(B) ईश्वर आस्था और बुद्धि दोनों का विषय है
(C) ईश्वर केवल आस्था का विषय है
(D) ईश्वर केवल सकल्प व सवेग का विषय है

33. ससार की वस्तुओं के रूप ईश्वर के ही प्रतिबिम्ब हैं यह किसने कहा?
(A) डेकार्ट ने
(B) लाइबनिज ने
(C) सेण्ट अगस्टाइन ने
(D) अरस्तू ने

34. सृष्टि में तत्कालीन कारणता नहीं है, समस्त वस्तुओं के रूपों का मूल कारण ईश्वर के बीज सिद्धान्त हैं यह विचार किसका है?
(A) सेण्ट अगस्टाइन का
(B) कान्ट का
(C) लाइबनिज का
(D) स्पिनोजा का

35. मानव जाति मूल पाप से अगस्टाइन के अनुसार कैसे मुक्त हो सकती है?
(A) ज्ञान से
(B) भक्ति से
(C) योग से
(D) ईश्वर-कृपा से

36. ईश्वर आस्था का विषय है फिर भी वह तर्कों से प्रमाणित होता है यह विचार किसने दिया?
(A) सेण्ट अगस्टाइन ने
(B) सेण्ट थॉमस एक्विनस ने
(C) प्लेटो ने
(D) अरस्तु ने

37. बाँसुरी के स्वर के समान मानव आत्मा शरीर की क्रियाशीलता है. यह किसका विचार है?
(A) प्लेटो का
(B) प्लोटीनस का
(C) सेण्ट थॉमस एक्विनस का
(D) सेण्ट अगस्टाइन का

38. प्रकृति ही ईश्वर है और ईश्वर ही प्रकृति है. यह किसका विचार है?
(A) स्पिनोजा का
(B) डेकार्ट का
(C) लाइबनिज का
(D) शंकराचार्य का

39. स्पिनोजा का ईश्वर विषयक विचार निम्नलिखित में क्या है?
(A) ईश्वर निरपेक्ष, निर्गुण, निराकार और प्रयोजनहीन है
(B) ईश्वर सगुण, निरपेक्ष निराकार व प्रयोजनपूर्ण है
(C) ईश्वर सापेक्ष, सगुण और प्रयोजनपूर्ण है
(D) ईश्वर निराकार, सप्रयोजन सकल्पमय व सार्वभौम है

40. ईश्वर असीम विचार व असीम विस्तार स्वय है, जगत् की समस्त वस्तुएं गुणादि इसी के पर्याय हैं यह किसने स्वीकार किया?
(A) स्पिनोजा ने
(B) लाइबनिज ने
(C) सेण्ट अगस्टाइन ने
(D) बर्कले ने

41. समस्त सृष्टि में नियतत्ववाद (Determinism) का शासन है, यहाँ कुछ भी स्वतंत्र नहीं है, यह किसने कहा?
(A) डेकार्ट ने
(B) स्पिनोजा ने
(C) लाइबनिज ने
(D) लॉक ने

42. स्पिनोजा-दर्शन में विकास का क्या रूप है?
(A) यह जैविकीय है
(B) यह सृजनात्मक है
(C) यह गणितीय या ज्यामितीय है
(D) यह उदगामी (Emergent) है

43. मानव के संकल्प-स्वातंत्र्य के विषय में स्पिनोजा का क्या विचार था?
(A) मानव में संकल्प-स्वातंत्र्य है
(B) मानव में सीमित संकल्प-स्वातंत्र्य है
(C) मानव में आत्म-निर्धारित संकल्प-स्वातंत्र्य है
(D) मानव में सकल्प-स्वातंत्र्य नहीं है केवल ज्ञान के अनुपात में उसे स्वतंत्रता प्राप्त है

44. शरीर और मनस के सम्बन्ध में स्पिनोजा का क्या विचार है?
(A) समानान्तरवाद
(B) अन्तर्क्रियावाद या प्रसंगवाद
(C) पूर्वस्थापित सामंजस्य
(D) द्वैतवाद

45. डेकार्ट शरीर की व्याख्या किस प्रकार से करता है?
(A) यन्त्रवादी ढंग से
(B) प्रयोजनवादी ढंग से
(C) विकासवादी ढंग से
(D) अध्यात्मवादी ढंग से

46. लाइबनिज के चिद्‌णु मूल रूप से निम्नांकित में क्या हैं?
(A) आध्यात्मिक शक्ति केन्द्र
(B) भौतिक शक्ति केन्द्र
(C) मनोवैज्ञानिक शक्ति केन्द्र
(D) प्राणिक शक्ति केन्द्र

47. न्याय वैशेषिक का ईश्वर अधोलिखित में क्या है?
(A) अन्तर्वर्ती (जगत् में व्याप्त) है
(B) परावर्ती (जगत् के परे) है
(C) उपर्युक्त दोनों है
(D) उपर्युक्त में कुछ नहीं है

48. न्याय वैशेषिक में ईश्वर सृष्टि का कैसा कारण है?
(A) उपादान कारण
(B) निमित्त कारण
(C) अन्य कारण
(D) आकारगत कारण

49. न्याय-वैशेषिक के अनुसार मानव-आत्मा क्या है?
(A) यह एक चेतना रहित द्रव्य है
(B) यह एक चेतन तत्व स्वय है
(C) यह न चेतन है न अचेतन
(D) यह दोनों है

50. न्याय-वैशेषिक दर्शन को क्या सज्ञा देना उचित है?
(A) बहुत्ववादी यथार्थवाद
(B) एकत्ववादी यथार्थवाद
(C) द्वैतवादी यथार्थवादी
(D) बहुत्ववादी अध्यात्मवाद

51. मुक्तावस्था में आत्मा का स्वरूप न्याय-वैशेषिक के अनुसार क्या होता है?
(A) चेतनाविहीन सुख-दुःख से परे शान्त द्रव्य रूप
(B) चैतन्य रूप आनन्द स्वरूप
(C) चेतना रहित आनन्द स्वरूप
(D) केवल शुद्ध चैतन्य

52. शंकराचार्य के अनुसार सार्वभौम आत्मा का स्वरूप क्या है?
(A) यह ज्ञान स्वरूप अनिवर्चनीय है
(B) यह सर्वत्र और ज्ञेय है
(C) यह स्वचेतन और सर्वज्ञ है
(D) यह ज्ञाता और ज्ञेय है

53. शंकर के अनुसार जीवात्मा मोक्ष में किस स्थिति में होती है?
(A) जीवात्मा का ब्रह्म में विलय हो जाता है
(B) जीवात्मा ईश्वर का स्वरूप धारण करती है
(C) जीवात्मा मुक्त रूप में अपना अस्तित्व बनाए रखती है
(D) जीवात्मा ईश्वर के लोक में निवास करती है

54. रामानुजाचार्य के अनुसार ईश्वर, जीव, जगत् के मध्य क्या सम्बन्ध है?
(A) तीनों अवयवी पूर्णता में भिन्न-भिन्न किन्तु एक हैं
(B) ईश्वर तथा जीव-जगत् में द्वैत है
(C) ईश्वर व जीव एक रूप हैं तथा जड़, जगत् की पृथक् सत्ता है
(D) ईश्वर पृथक् सत्ता तथा जीव और जड़ (चित + अचित) पृथक् सत्ताएँ हैं

83. भारतीय चिन्तन में 'अपूर्व' का सिद्धान्त किसने प्रतिपादित किया?
(A) सांख्यवादियों ने
(B) वैशेषिकों ने
(C) मीमांसकों ने
(D) चार्वाकों ने

84. सृष्टि की सत्ताएँ कर्मों, कारणों और ऋतुओं के परिणाम हैं—यह निम्नलिखित में किसने कहा?
(A) कपिल ने
(B) शंकराचार्य ने
(C) बुद्ध ने
(D) कणाद ने

85. परम सत को निरपेक्ष शून्य किसने कहा?
(A) बुद्ध ने
(B) महावीर ने
(C) कणाद ने
(D) चार्वाक ने

86. भारतीय चिन्तन में सृष्टि की नितान्त अणुवादी व्याख्या निम्नांकित में किसने की?
(A) बादरायण व्यास ने
(B) सांख्य दर्शन ने
(C) शंकराचार्य ने
(D) वैशेषिक व न्याय दर्शन ने

87. निम्नलिखित में किसने दस तात्विक प्रश्नों के उत्तर नहीं दिये?
(A) बुद्ध ने (B) महावीर ने
(C) कपिल ने (D) कणाद ने

88. संसार में बुराई का कारण मानव का अशुभ संकल्प और भलाई का कारण ईश्वर कृपा है—यह निम्नलिखित में से किसने कहा?
(A) अरस्तू ने
(B) प्लोटीनस ने
(C) सेण्ट अगस्टाइन ने
(D) डेकार्ट ने

89. यह किसने कहा कि ईश्वर आस्था का और विज्ञान बुद्धि का विषय है?
(A) अरस्तू ने
(B) डेकार्ट ने
(C) काण्ट ने
(D) सेण्ट अगस्टाइन ने

90. "आत्मा शरीर का कार्य है और शरीर में प्राण के समान सर्वत्र व्याप्त है"—यह विचार किसने दिया?
(A) प्लेटो ने
(B) पाइथागोरस ने
(C) डेकार्ट ने
(D) सेण्ट थॉमस एक्विनस ने

91. पश्चिमी दर्शन में सर्वेश्वरवाद का प्रबल पक्षधर निम्नलिखित में से कौन था?
(A) काण्ट
(B) लाइबनिज
(C) डेकार्ट
(D) स्पिनोजा

92. "ईश्वर के प्रति ज्ञान पूर्ण (ज्ञान प्रेम) मनुष्य के लिये उचित है"—यह मत निम्नलिखित में किसका था?
(A) डेकार्ट का
(B) स्पिनोजा का
(C) लाइबनिज का
(D) लॉक का

93. स्पिनोजा का परम सत (ब्रह्म या ईश्वर) किस भारतीय दर्शन के परम सत से मिलता जुलता है?
(A) रामानुज के विशिष्ट द्वैत के परम सत् से
(B) शंकर के अद्वैतवाद के परम सत् से
(C) मध्व के द्वैतवाद के परम सत् से
(D) सांख्य के पुरुष से

94. "ईश्वर कारण-प्रकृति व कार्य-प्रकृति एक साथ है और सृष्टि एक कारण शृंखला है, इसमें प्रयोजन ढूँढना व्यर्थ है"—यह किसने कहा?
(A) डेकार्ट ने
(B) स्पिनोजा ने
(C) अरस्तू ने
(D) लाइबनिज ने

95. शांकर वेदान्त के अनुसार 'सर्वं खलु इदम् ब्रह्म' ही सत्य है, इस प्रकार का प्रतिपादन निम्नांकित में किसने किया?
(A) स्पिनोजा ने
(B) अरस्तू ने
(C) डेकार्ट ने
(D) लाइबनिज ने

96. समस्त जगत् ईश्वर स्वयं में निहित आवश्यकता का परिणाम है—यह मत निम्नांकित में से किसका है?
(A) डेकार्ट का
(B) काण्ट का
(C) स्पिनोजा का
(D) सेण्ट थॉमस एक्विनस का

97. मानव-आत्मा या मनस प्रतिबिम्बित विचारों का नाम है—यह विचार निम्नांकित में किसका था?
(A) डेकार्ट का
(B) लॉक का
(C) बर्कले का
(D) स्पिनोजा का

98. "मनस और शरीर की व्याख्या क्रमशः मानसिक और भौतिक तथ्यों से ही की जा सकती है, क्योंकि दोनों न तो एक-दूसरे के कारण हैं, न एक-दूसरे को प्रभावित ही करते हैं"—यह किसका विचार है?
(A) स्पिनोजा का
(B) अरस्तू का
(C) कणाद का
(D) लॉक का

99. डेकार्ट का द्वैतवाद भारतीय चिन्तन में किस दर्शन के लगभग समान है?
(A) वैशेषिक दर्शन
(B) जैन दर्शन
(C) अद्वैत वेदान्त
(D) सांख्य दर्शन

100. "आत्मा पीनियल ग्रन्थि में निवास करती है"—यह किसने कहा?
(A) अरस्तू ने
(B) डेकार्ट ने
(C) स्पिनोजा ने
(D) लाइबनिज ने

101. "सत्य यह है जिसमें कार्यशक्ति हो जो चेतन, अविभाज्य व अविभाज्य हो"—यह मत किसका था?
(A) लाइबनिज का
(B) लॉक का
(C) डेकार्ट का
(D) स्पिनोजा का

102. "चिदणु समस्त विश्व का प्रतिबिम्बन करने वाली चेतन शक्ति है और इसमें गवाक्ष (Windows) नहीं है"—यह मत किसका है?
(A) डेकार्ट का
(B) स्पिनोजा का
(C) लाइबनिज का
(D) काण्ट का

103. "आत्मा या मनस वह चिदणु है जहाँ प्रत्यक्ष स्पष्ट है और पत्थर वह चिदणु है जहाँ प्रत्यक्ष अस्पष्ट है"—यह किसका मत है?
(A) काण्ट का
(B) लॉक का
(C) बर्कले का
(D) लाइबनिज का

104. मानव-आत्मा 'चिदणुओं की रानी' (Queen of monads) है—यह किसने कहा?
(A) लाइबनिज ने (B) लॉक ने
(C) स्पिनोजा ने (D) डेकार्ट ने

105. लाइबनिज को निम्नलिखित में क्या कहेंगे?
(A) एकत्ववादी (B) बहुत्ववादी
(C) यन्त्रवादी (D) द्वैतवादी

106. लाइबनिज के अनुसार मनस और शरीर के मध्य सम्बन्ध को क्या कहा गया?
(A) अन्तर्क्रियावाद
(B) समानान्तरवाद
(C) द्वैतवाद
(D) ईश्वर द्वारा पूर्व स्थापित सामंजस्य

107. डेकार्ट, स्पिनोजा व लाइबनिज को निम्नलिखित में क्या कहा जाता है?
(A) तर्कबुद्धिवादी
(B) इन्द्रियानुभववादी
(C) समीक्षावादी
(D) सहज ज्ञानवादी

108. न्याय-वैशेषिक धार्मिक सम्प्रदायों की दृष्टि से निम्नलिखित में क्या है?
(A) वैष्णव (B) शैव
(C) शाक्त (D) सौर

109. न्याय-वैशेषिक दर्शन में सृष्टि प्रक्रिया में कितने तत्व सलग्न रहते है?
(A) एक तत्व ईश्वर
(B) चार महाभूत—पृथ्वी, जल, वायु व अग्नि
(C) पाँच तत्व—पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि व आकाश
(D) दो तत्व—ईश्वर और अणु

110. किस दर्शन (भारतीय) ने आत्मा के मूल स्वरूप को चेतना विहीन दृव्य के रूप में माना?
(A) अद्वैत वेदान्त ने
(B) सांख्य ने
(C) बौद्धों ने
(D) न्याय-वैशेषिक ने

111. न्याय-वैशेषिक के अनुसार चेतना निम्नलिखित में किसका गुण है?
(A) इन्द्रियों का
(B) बुद्धि का
(C) मन का
(D) आत्मा का

112. न्याय-वैशेषिक के आत्मा का स्वरूप निम्नलिखित में क्या है?
(A) आत्मा केवल ज्ञान स्वरूप है
(B) आत्मा केवल ज्ञाता है
(C) आत्मा ज्ञान एवं ज्ञाता दोनों है
(D) आत्मा सुख-दुःखों का दृष्टा, भोक्ता और ज्ञाता (सर्वानुभावी) है

113. शंकराचार्य के अनुसार परम + आत्मा का स्वरूप निम्नलिखित में क्या है?
(A) परमात्मा एक सार्वभौम चेतन दृव्य है
(B) परमात्मा एक सार्वभौम चेतना, ज्ञाता और ज्ञान है
(C) परमात्मा एक अखण्ड चेतना और सर्वज्ञ है
(D) परमात्मा एक सार्वभौम अनिर्वचनीय चेतन तत्व व ज्ञान स्वरूप है

114. भारतीय चिन्तन में कौन विचारक जीवात्माओं की अनेकता और आत्मा को एक अखण्ड चेतना मानता है?
(A) कपिल (B) महावीर
(C) शंकराचार्य (D) बुद्ध

115. शंकर वेदान्त में सगुण ब्रह्म (ईश्वर) की स्थिति निम्नलिखित में क्या है?
(A) ईश्वर परम सत् है
(B) ईश्वर प्रपंच जगत् का तथ्य है
(C) ईश्वर व ब्रह्म एक ही तथ्य के दो नाम हैं, ईश्वर भी ज्ञान स्वरूप है
(D) इनमें से कोई नहीं

116. शंकराचार्य मुक्ति के लिये अत्यावश्यक साधन निम्नांकित में किसे मानते हैं?
(A) भक्ति को
(B) निष्काम कर्म को
(C) तपस्या को
(D) ज्ञान को

117. शंकराचार्य के अनुसार मानव शरीर में जीवात्मा का क्या स्वरूप है?
(A) जीवात्मा ईश्वर का अंश ही है
(B) जीवात्मा देहेन्द्रियादि से अनुगन्धित व शरीर की सीमा में सीमित परमात्मा ही है
(C) जीवात्मा एक पृथक् चेतन सत्ता है
(D) इनमें से कोई नहीं

118. शंकर-दर्शन में निर्गुण और सगुण ब्रह्म में क्या सम्बन्ध है?
(A) दोनों एक ही हैं
(B) दोनों परस्पर विरोधी सत्ताएँ हैं
(C) दोनों में शक्ति विषयक भेद है
(D) निर्गुण ब्रह्म ही तर्क के साँचे में ढला हुआ ईश्वर या सगुण ब्रह्म कहलाता है

119. शंकर-दर्शन में ब्रह्म व सृष्टि में निम्नलिखित में क्या सम्बन्ध है?
(A) ब्रह्म सृष्टा है व सृष्टि उसकी सृजन है
(B) ब्रह्म तत्व है व सृष्टि उसकी अभिव्यक्ति है
(C) ब्रह्म दृव्य है व सृष्टि उसका विकास है
(D) सर्वत्र ब्रह्म ही है सृष्टि उसका आभास मात्र है

120. शंकर के अनुसार जीवात्मा मानव शरीर में कहाँ निवास करती है?
(A) हृदय गुफा में
(B) मस्तिष्क में
(C) नाभि में
(D) समग्र शरीर में

121. रामानुजाचार्य के दर्शन को विशिष्टा-द्वैतवाद कहने का निम्नलिखित में कौन कारण है?
(A) वह भक्ति पर विशेष बल देते हैं
(B) वह ब्रह्म को ज्ञान और ज्ञाता दोनों मानते हैं
(C) उनका ब्रह्म (सगुण) विष्णु है
(D) वह आंगिक अवधारणा प्रस्तुत करते हुए ब्रह्म को विशेष (अंग) तथा जीव व जगत् को विशेषण (अंगी) मानते हैं

122. रामानुजाचार्य के अनुसार मोक्ष में जीवात्मा की स्थिति निम्नलिखित में कौनसी होती है?
(A) जीवात्मा का ब्रह्म में विलयन हो जाता है
(B) जीवात्मा को ईश्वरत्व प्राप्त हो जाता है
(C) जीवात्मा परमात्मा के आनन्द में प्लावित अपनी पृथक् सत्ता बनाए रखता है
(D) जीवात्मा का स्वरूप पूर्णरूप से समाप्त हो जाता है

123. रामानुजाचार्य ईश्वर, जीव, जगत् में किस भेद को स्वीकार करते है?
(A) सजातीय भेद को
(B) विजातीय भेद को
(C) स्वगत भेद को
(D) इनमें से कोई नहीं

124. विपर्यय के सम्बन्ध में रामानुजाचार्य का निम्नांकित में कौनसा मत है?
(A) अनिर्वचनीय ख्याति
(B) आत्म ख्याति
(C) अन्यथा ख्याति
(D) सत् ख्याति

125. रामानुजाचार्य ईश्वर, जीव व जगत् के बीच निम्नांकित सम्बन्धों में किसे स्वीकार करते हैं?
(A) स्वगत भेद किन्तु अपार्थक्य
(B) स्वगत भेद एवं पार्थक्य
(C) जातीय भेद एवं पार्थक्य
(D) अभेद एवं अपार्थक्य

126. शंकराचार्य ब्रह्म, जीव, जगत् में निम्नांकित सम्बन्धों में किसे मान्यता प्रदान करते हैं?
(A) अभेद एवं अपार्थक्य को
(B) स्वगत भेद एवं अपार्थक्य को
(C) जातीय भेद एवं अपार्थक्य को
(D) विजातीय भेद एवं अपार्थक्य को

127. रामानुजाचार्य ने शंकराचार्य द्वारा प्रतिपादित किस सिद्धान्त का तीव्र विरोध किया?
(A) माया सिद्धान्त का
(B) ज्ञानवाद का
(C) ईश्वर सिद्धान्त का
(D) जीवात्मा सिद्धान्त का

128. विवर्तवाद किसका सिद्धान्त है?
(A) शंकराचार्य का
(B) रामानुजाचार्य का
(C) सांख्य का
(D) बौद्धों का

129. रामानुज के सगुण ब्रह्म का स्वरूप निम्नलिखित में क्या है?
(A) ब्रह्म सत्, चित्, आनन्द के सहित अनन्त गुणों का भण्डार है
(B) ब्रह्म केवल सत् और चित् है
(C) ब्रह्म मात्र आनन्द स्वरूप है
(D) ब्रह्म में केवल सत्, चित् व आनन्द के तत्व हैं

130. रामानुजाचार्य में आत्मा का स्वरूप निम्नलिखित में क्या है?
(A) आत्मा ज्ञान स्वरूप है
(B) आत्मा ज्ञान, ज्ञाता और आत्म-चेतन (Self-Concious) भी है
(C) आत्मा मात्र ज्ञाता है
(D) आत्मा में केवल अभिज्ञता (Awareness) है

131. सामान्यों के विषय में दर्शन में निम्नांकित में कितने मत प्रचलित है?
(A) तीन (B) दो
(C) चार (D) पाँच

132. सामान्यों की यथार्थ सत्ता निम्नलिखित में किसे मान्य थी?
(A) प्लेटो व कणाद
(B) बौद्ध व बर्कले
(C) एबलार्ड व रोसलिन
(D) लॉक व ह्यूम

133. भारतीय विचारकों में अनुमान-ज्ञान को निम्नांकित में कौन अस्वीकार करता है?
(A) न्याय-वैशेषिक
(B) चार्वाक
(C) सांख्य
(D) अद्वैत वेदान्त

134. भारतीय दर्शन में तर्कशास्त्र का प्रथम प्रणेता निम्नलिखित में कौन था?
(A) बुद्ध (B) महावीर
(C) गौतम (D) कपिल

135. मानव अस्तित्व को पाँच स्कन्धों का संघात किस भारतीय विचारक ने निम्नलिखित में कहा?
(A) बुद्ध ने
(B) चार्वाक ने
(C) कणाद ने
(D) याज्ञवल्क्य ने

136. भगवान बुद्ध ज्ञान के साधनों प्रत्यक्ष, अनुमान व तुलना शब्द-प्रमाण में किसे मानते थे?
(A) प्रत्यक्ष व अनुमान को
(B) प्रत्यक्ष व तुलना को
(C) प्रत्यक्ष व शब्द प्रमाण को
(D) अनुमान व शब्द प्रमाण को

137. भ्रम विषयक अन्यथा ख्याति सिद्धान्त निम्नलिखित में किसका है?
(A) न्याय दर्शन का
(B) माध्यमिक दर्शन का
(C) अद्वैत वेदान्त का
(D) विशिष्टाद्वैतवाद का

138. अनिर्वचनीय ख्याति का सिद्धान्त निम्नलिखित में किसने प्रतिपादित किया?
(A) शंकराचार्य ने
(B) बुद्ध ने
(C) महावीर ने
(D) कपिल ने

139. शंकराचार्य ने निम्नलिखित में किस प्रमाण को सर्वोच्च व अकाट्य माना?
(A) अनुमान को
(B) तुलना को
(C) प्रत्यक्ष को
(D) श्रुति प्रमाण को

140. सत्य के ससक्तता सिद्धान्त (Coherence Theory of Truth) को कौनसे दार्शनिक स्वीकार करते हैं?
(A) यथार्थवादी दार्शनिक

(B) व्यावहारिकतावादी दार्शनिक
(C) अध्यात्मवादी दार्शनिक
(D) तार्किक भाववादी दार्शनिक

उत्तरमाला

1. (D)	2. (D)	3. (D)	4. (A)
5. (D)	6. (B)	7. (D)	8. (B)
9. (C)	10. (D)	11. (B)	12. (B)
13. (A)	14. (B)	15. (A)	16. (C)
17. (B)	18. (C)	19. (C)	20. (A)
21. (B)	22. (B)	23. (D)	24. (D)
25. (D)	26. (D)	27. (C)	28. (B)
29. (D)	30. (A)	31. (A)	32. (C)
33. (C)	34. (A)	35. (D)	36. (B)
37. (C)	38. (A)	39. (A)	40. (A)
41. (B)	42. (C)	43. (D)	44. (A)
45. (A)	46. (A)	47. (B)	48. (B)
49. (A)	50. (A)	51. (A)	52. (A)
53. (A)	54. (A)	55. (B)	56. (B)
57. (A)	58. (B)	59. (A)	60. (B)
61. (D)	62. (A)	63. (B)	64. (A)
65. (C)	66. (C)	67. (A)	68. (D)
69. (A)	70. (C)	71. (B)	72. (C)
73. (B)	74. (D)	75. (B)	76. (B)
77. (A)	78. (B)	79. (B)	80. (D)
81. (C)	82. (C)	83. (C)	84. (C)
85. (A)	86. (D)	87. (A)	88. (C)
89. (D)	90. (D)	91. (D)	92. (B)
93. (B)	94. (B)	95. (A)	96. (C)
97. (D)	98. (A)	99. (D)	100. (B)
101. (A)	102. (C)	103. (D)	104. (A)
105. (B)	106. (D)	107. (A)	108. (B)
109. (D)	110. (D)	111. (D)	112. (D)
113. (D)	114. (C)	115. (B)	116. (D)
117. (B)	118. (D)	119. (D)	120. (D)
121. (D)	122. (C)	123. (C)	124. (D)
125. (A)	126. (A)	127. (A)	128. (A)
129. (A)	130. (B)	131. (A)	132. (A)
133. (B)	134. (C)	135. (A)	136. (A)
137. (A)	138. (A)	139. (D)	140. (C)